UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180950

UNIVERSAL
LIBRARY

# OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 82    Accession No. P. G H. 298

Author S12S

Title श्री स्वामी आत्माराम

This book should be returned on or before the date last marked below.    सन्त कबीर

# सन्त कबीर

लेखक
माधुराम शास्त्री, एम० ए०, एम० ओ० एल०
प्रोफेसर, डी० ए० वी० कालेज, लाहौर

प्रकाशक
इंडियन प्रेस, इलाहाबाद

मुद्रक: एम० एल० पाण्डेय, इलाहाबाद प्रिंटिङ्ग प्रेस, इलाहाबाद

# हमारा उद्देश्य

हिन्दुओं और मुसलमानों को एक दूसरे के निकट लाना ही इस पुस्तक का मुख्य प्रयोजन है। सन्त कबीर के समय में धार्मिक असहिष्णुता बहुत बढ़ गई थी। कबीर ने इस असहिष्णुता और वैमनस्य को मिटाकर एकता और भ्रातृभाव को उत्पन्न करने का भरसक प्रयत्न किया। कहते हैं कि कबीर को अपने उद्देश्य में यथेष्ट सफलता प्राप्त न हुई और इसका मुख्य कारण यह बताया जाता है कि उस समय हिन्दू और मुसलमान दोनों ही अपनी प्रचलित रूढ़ियों को छोड़कर एक दूसरे के निकट आने के लिए तय्यार न थे।

आज भी हमारी धार्मिक स्थिति क़रीब-करीब वही है जो कि कबीर के समय में थी। हाँ, एक बात नई है, कबीर के समय में तो साधारण हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे के निकट आने की आवश्यकता ही नहीं समझते थे, किन्तु अब समय के चक्र ने उन्हें यह सिखा दिया है कि उनका कल्याण आपस में मिलकर रहने में ही है। इसलिए सर्वसाधारण भ्रातृभाव के लिए उत्सुक है। ऐसी स्थिति में धार्मिक विरोध को कम करने के लिए जो भी प्रयत्न किया जायगा, वह अवश्य सफल होगा। इसी विचार को लेकर हम इस पुस्तक के लिखने में प्रवृत्त हुए।

हमें पूर्ण आशा है कि स्वार्थ और सामयिक परिस्थितियों के कारण कबीर के जिन विचारों से लोग आज से पांच सौ वर्ष पहले लाभ न उठा सके, अब उनसे अवश्य लाभ उठा सकते हैं। कबीर ने हमारे रोग के निदान को समझ लिया था और उसके लिए जो औषधि तजवीज़ की थी वही उपयोगी थी; किन्तु शोक, औषधि का प्रयोग कुसमय में हुआ। इसीलिए अभीष्ट फल की सिद्धि न हुई। आज उस औषधि के प्रयोग का समय आ गया है; अब अवश्य उससे लाभ होगा। इस धारणा को लेकर हमने यह नाटक लिखा है। इसमें कबीर के धार्मिक

विचारों को यथासम्भव स्पष्ट और सरल रूप में पेश करने का प्रयत्न किया गया है।

सन्त कबीर का यह दृढ़ विश्वास था कि जब तक लोग धार्मिक उदारता का अवलम्बन न करेंगे तबतक उनका कल्याण नहीं हो सकता। धार्मिक उदारता के उत्पन्न होने का एक ही प्रकार है, वह यह कि हम अपने धर्म की त्रुटियों को धैर्य से सुनें और उन पर शान्तिपूर्वक विचार करें। साथ ही दूसरे धर्मों की खूबियों को सुनने का भी हम में साहस हो। धार्मिक जगत् में साधारण लोगों के हृदय में यह बात बिठा दी जाती है कि तुम्हारे धर्म में सब खूबियाँ ही खूबियाँ हैं और दूसरे धर्मों में सब दोष ही दोष हैं। इसका परिणाम यह निकलता है कि साधारण लोग अपनी त्रुटियाँ सुनने के लिए तय्यार नहीं होते। वे अपने आपको उच्च और अन्य धर्मावलम्बियों को नीच समझने लग तों हैं। बस यहीं से धार्मिक विद्वेष का श्रीगणेश हो जाता है।

कबीर इस बात को खूब समझते थे कि जब तक धार्मिक लोगों को उनके अपने धर्म की त्रुटियों से परिचित न कराया जायगा तब तक धार्मिक असहिष्णुता नहीं मिट सकती। धार्मिक संकीर्णता ही सारे झगड़ों का मूल है। और इस संकीर्णता को दूर करने का यही एक उपाय है कि जहाँ तुम्हारे धर्म में बहुत से गुण और बहुत से दोष हैं वहाँ दूसरे धर्मों में भी बहुत से गुण और बहुत से दोष हैं। हम दूसरे के दोषों को प्रसन्नता से सुन लेते हैं, किन्तु जब कोई हमारे दोष निकालता है तो हम आपे से बाहर हो जाते हैं। कबीर ने जान की बाज़ी लगाकर लोगों को इस बात की आदत डाली कि वे अपने दोषों को सुन सकें। परन्तु अभी तक वह बात नहीं आई जिसको कबीर चाहते थे। जब लोग अपने दोषों को भी उतनी ही प्रसन्नता से सुनने लगेंगे जितनी प्रसन्नता से दूसरों के दोषों को सुनते हैं तो समझो, संसार का कल्याण होगया और धार्मिक द्वेष की इतिश्री होगई। यह कार्य है बड़ा कठिन, किन्तु इसके बिना हमें शान्ति नहीं मिल सकती।

आजकल कुछ लोग यह कहते हुए सुने गये हैं कि किसी के धर्म के दोषों को नहीं निकालना चाहिए, क्योंकि इससे धार्मिक द्वेष बढ़ जाता है। किन्तु शोक है कि हम इस विचार से सहमत न हो सके। हाँ, यदि कोई व्यक्ति पक्षपात से हट और दुराग्रह करके किसी धर्म के दोष केवल इसलिए निकालता है कि उस धर्म को बदनाम और संसार की दृष्टि में घृणित बनाया जाए तो निःसन्देह वह व्यक्ति एक नीच काम कर रहा है। धर्म का उद्देश्य बड़ा पवित्र है। इसकी बुनियाद सचाइयों पर रक्खी जाती है किन्तु कालक्रम से और स्वार्थी लोगों के प्रभाव से हर एक धर्म में कोई न कोई त्रुटि अवश्य आ जाती है। इस प्रकार की त्रुटियों को दूर करना ही सुधारकों का परम कर्तव्य है।

कबीर इसी प्रकार के सुधारक थे। आज भी उनके विचारों को जनता में इसी उद्देश्य से रक्खा जा रहा है। सम्भव है कबीर के विचार अब भी किसी भद्र पुरुष को कड़वे लगें। इसके लिए हम अपने कृपालु पाठकों से क्षमा माँगते हैं। हमने कबीर के विचारों को नए सांचे में ढालने का प्रयत्न नहीं किया, यदि हम ऐसा करते तो कबीर के साथ भारी अन्याय होता। हमने तो कबीर के विचारों को तथा उस समय की धार्मिक, सामाजिक और सार्वजनिक परिस्थितियों को उनके अपने असली रूप में पेश करने का प्रयत्न किया है।

इसीलिए जिन सिद्धान्तों का प्रतिपादन इस पुस्तक में हुआ है, यह आवश्यक नहीं कि लेखक उनसे सहमत है। लेखक भी अन्य पाठकों की भाँति कुछ विचारों से सहमत हो सकता है और कुछसे असहमत। हमें तो यह देखना है कि आज पाँच सौ वर्ष के पश्चात् कबीर के विचार हमारे लिए कहाँ तक उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं इसलिए वर्तमान पुस्तक लेखक के अपने विचारों का प्रतिबिम्ब नहीं और न ही वर्तमान युग की प्रतिनिधि है; अपितु पन्द्रहवीं शताब्दी के भारतवर्ष की एक झलक है।

अपने कृपालु पाठकों से विदा होने के पूर्व हम इस नाटक के प्रतिपाद्य विषय की रूपरेखा पाठकों के सामने उपस्थित कर रहे हैं ताकि एक दृष्टि में ही पुस्तक के विषय का कुछ ज्ञान हो जाय:—

## ( १ ) पहला अंक—

( क ) **पहला दृश्य**—कबीर के कार्यों से उनके मातापिता की व्याकुलता।

( ख ) **दूसरा दृश्य**—कबीर के कार्यों से कुटुम्ब को संकट की आशंका।

( ग ) **तीसरा दृश्य**—रामानन्दजी से दीक्षा। रामानन्दजी के सिद्धान्तों पर प्रकाश।

( घ ) **चौथा दृश्य**—रामानन्दजी से दीक्षा लेने पर कबीर के माता पिता का उद्वेग।

( ङ ) **पाँचवाँ दृश्य**—कबीर का अपनी पत्नी के साथ घर की अवस्था पर गम्भीर विचार।

## ( २ ) दूसरा अंक—

( क ) **पहला दृश्य**—शेख तक़ी द्वारा सूफ़ी सिद्धान्तों की व्याख्या।

( ख ) **दूसरा दृश्य**—मानिकपुर में कबीर द्वारा ब्रह्मवाद के सिद्धान्तों की व्याख्या।

( ग ) **तीसरा दृश्य**—तक़ी और कबीर के वादविवाद का आयोजन।

( घ ) **चौथा दृश्य**—तक़ी और कबीर का वार्तालाप तथा सूफ़ी मत से कबीर के सिद्धान्तों का विरोध।

## ( ३ ) तीसरा अंक—

( क ) **पहला दृश्य**—नागरिकों के वार्तालाप द्वारा सामाजिक अवस्था का दिग्दर्शन।

( ख ) **दूसरा दृश्य**—शिष्य मंडली के सामने रामानन्दजी द्वारा अपने

सिद्धान्तों की व्याख्या और शिष्यों की शंकाओं का समाधान ।

( ग ) तीसरा दृश्य—कबीर और रामानन्द का वार्तालाप । मुख्य विषय, अवतार ।

( घ ) चौथा दृश्य—कबीर और नानक की मुलाक़ात । पंजाब और यू० पी० की परिस्थितियों की तुलना ।

## ( ४ ) चौथा अंक—

( क ) पहला दृश्य—सिकन्दर लोदी के दरबार में कबीर के सम्बन्ध में में विचार, देश की राजनीतिक दशा ।

( ख ) दूसरा दृश्य—कबीर के घर की स्थिति ।

( ग ) तीसरा दृश्य—कबीर के लिए जनता में सहानुभूति ।

( घ ) चौथा दृश्य—कबीर को मृत्युदंड और उसमें असफलता ।

( ङ ) पाँचवाँ दृश्य—कबीर के छूटने पर घर की प्रसन्नता ।

## ( ५ ) पाँचवाँ अंक—

( क ) पहला दृश्य—काशी त्याग और मगहर प्रस्थान ।

( ख ) दूसरा दृश्य—सन्त मत और सूफ़ी मत का मौलिक भेद ।

( ग ) तीसरा दृश्य—मृत्यु ।

## नाटक के पात्र

### पुरुष पात्र

कबीर—कथानायक

रामानन्द—कबीर के गुरु

शेख तक़ी—माणिकपुर के एक मुसलमान सूफी फ़कीर।

सिकन्दर लोदी—दिल्ली का बादशाह

कमाल—कबीर का पुत्र

धर्मदास]—कबीर के प्रधान शिष्य

भागूदास]—

रविदास]—रामानन्द जी के प्रधान शिष्य

सेन]—

पीपा]—

नीरू—कबीर के पिता

नानक—गुरु नानक देव, सिक्खों के आदि गुरु

### स्त्री पात्र

लोई—कबीर की पत्नी

कमाली—कबीर की पुत्री

नीमा—कबीर की माता

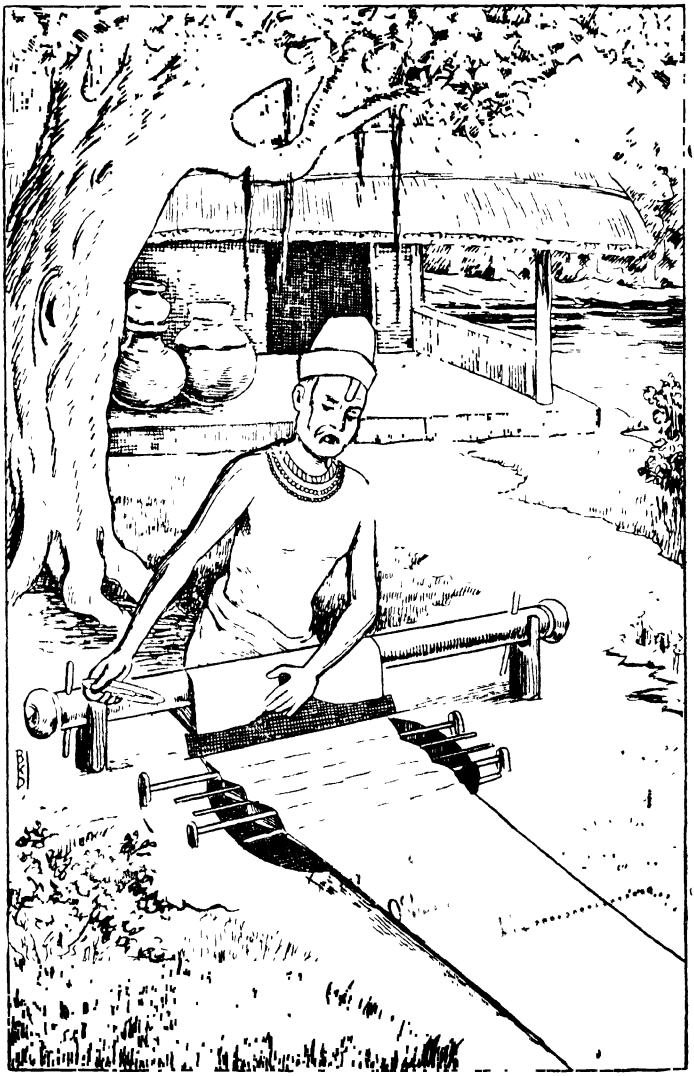

सन्त कबीर करघा चला रहे है

# सन्त कबीर

## पहला अङ्क

### पहला दृश्य

[ स्थान काशीधाम। समय प्रातःकाल। एक कच्चे घर के आँगन में बड़ के पेड़ के नीचे सन्त कबीर अपने करघे पर बैठे हैं और मन्द-मन्द स्वर में गा रहे हैं। ]

कबीर—को बीनैं प्रेम लागौ री माई, को बीनैं।
राम रसाईण माते री, माई, को बीनैं॥
पाई पाई तूं पुतिहाई,
पाई की तुरियाँ बेची खाई री माई, को बीनैं॥
ऐसैं पाई पर बिथुराई,
त्यूं रस आनि बनायौ री माई, को बीनैं॥
नाचै तानां नाचै बानां,
नाचै कूंच पुराना री माई, को बीनैं॥
करगहि बैठि कबीरा नाचै,
चूहै काट्या तानां री माई, को बीनैं॥

[ नीमा का आगमन ]

कबीर—( प्रणाम करके ) आइये माताजी, बैठिये। प्रभु भक्ति के लिए इससे अच्छा समय और कौन सा हो सकता है। अच्छा हुआ कि आप आ गईं; अब दोनों मिलकर भगवान् का गुण-गान करेंगे।

नीमा—( सर्द आह भरकर ) मेरी आँखों के नूर, तुझे क्या हो

गया। तू कुछ कमाकर भी खाएगा या नहीं। गज़ब खुदा का, सूत को चूहों ने काट डाला है। सूतवालों को क्या मुँह दिखाऊँगी और उनके दाम कहाँ से दूँगी। ओह! करघा और कूच भी खराब हो गये हैं। तू इतना लापरवाह है कि कुछ ख्याल ही नहीं। आज नलियाँ भी नहीं भरीं, कपड़ा क्या खाक बुनोगे। खुदा के वास्ते अपने बूढ़े बाप की हालत पर तो तरस खाओ। वह तो इस बुढ़ापे में रात-दिन कमा रहा है और तू निठल्ला बैठा खा रहा है। क्या तुझे लज्जा नहीं आती? (रोने लगती है)

कबीर—(नम्रता से) माताजी, देनेवाला भगवान है। उस स्वामी के भंडार से कीड़ी-कुंजर सबको निशिदिन भोजन मिल रहा है। पहाड़ों की कन्दराओं में पड़ा हुआ अजगर चल-फिर भी नहीं सकता; किन्तु भगवान उसे वहीं भोजन पहुँचा देते हैं। पत्थर में कीड़ा है, चल फिर नहीं सकता; किन्तु परमेश्वर की दया से भोजन के विषय में निश्चिन्त है।

नीमा—(गम्भीर भाव से) बेटा, यह ठीक है कि खुदा बड़ा मेहरबान है। वह सबको रिज़क देनेवाला है, लेकिन साथ ही इन्सान का अपना अमल भी चाहिए। खुदा ने हाथ पैर दिये हैं, कमाकर खाने के लिए। जो लोग इनसे काम नहीं लेते, खुदा उनकी मदद नहीं करता। तुम खुद ही तो कहा करते हो कि खुदा उनकी मदद करता है, जो अपनी मदद आप करते हैं।

कबीर—माताजी, मुझे केवल इतना चाहिए जिससे साथ-साथ गुज़ारा हो सके, धन जमा करना मुझे अभीष्ट नहीं।

नीमा—पुत्र, हम गरीब लोग धन तो जमा कर ही नहीं सकते लेकिन, एक बात ध्यान में रक्खो कि तुम अब अकेले नहीं हो। तुम्हारी शादी हो चुकी है। अब तुम्हें अपनी दुलहन का पेट भी भरना है।

कबीर—(कुछ सोचकर) माताजी, शायद तुम लोई को मेरी दुलहन

कह रही हो, वह मेरी दुलहन नहीं, जीवन-संगिनी अवश्य है। मेरा विवाह तो हो चुका है; किन्तु लोई के साथ नहीं, अपितु अकाल पुरुष के साथ। वे अकाल पुरुष मेरे दुलहा हैं और मैं उनकी दुलहन। सच तो यह है कि संसार में अविनाशी पुरुष राम ही एक दुलहा है और बाकी सब दुलहनें।

नीमा—(घबराकर) बेटा, तुम बहकी-बहकी बातें करते हो। तुम्हारी इसी प्रकार की बेसिर-पैर की बातें सुनकर ही तो मेरी व्याकुलता बढ़ती जा रही है। तुम पुरुष हो, नारी नहीं। भला फिर किसी की दुलहन किस प्रकार बन गये। पुत्र, मन में निश्चय करलो कि तुम दुलहा हो और लोई तुम्हारी दुलहन।

कबीर—माताजी, यह तुम्हारी समझ का फेर है। वह परमात्मा पुरुष है और यह जीवात्मा उसके विरह में तड़पनेवाली नारी। जब आत्मा अपने प्रीतम को प्राप्त हो जाती है, तब एक प्रकार से उसका विवाह हो जाता है और तभी उसे शान्ति मिलती है।

[ नीमा का प्रस्थान ]

कबीर—( गाते हैं )

बालम आओ हमारे गेह रे। तुम बिन दुखिया देह रे॥
सब कोई कहे तुमारी नारी। मोको यह सन्देह रे॥
एकमेक ह्वै सेजन सोवै। तब लग कैसो नेह रे॥
अन्न न भावै नींद न आवै। गृह बन धरे न धीर रे॥
ज्यों कामी को कामिनी प्यारी। ज्यों प्यासे को नीर रे॥
है कोई ऐसा पर उपकारी। पिय से कहे सुनाय रे॥
अब तो बेहाल कबीर भये हैं। बिन देखे जिउ जाव रे॥

( कबीर गाते गाते मस्त होकर बेसुध हो जाते हैं )

पर्दा गिरता है

## दूसरा दृश्य

[ स्थान काशीधाम। समय मध्याह्न। नीरू और नीमा आपस में बातें कर रहे हैं। साथ की कोठरी में लोई एक चारपाई पर लेटी हुई है। सास सुसर की वार्तालाप के अस्पष्ट-सी ध्वनि उसके कानो तक पहुँच रही है। ]

नीमा--क्या तुम अपने बेटे के बारे में भी कुछ जानते हो ?

नीरू—[ आवेश में आकर ] हाँ, यही कि वह एक निखट्टू युवक है। काम-काज में उसका जी नहीं लगता। बातें सुनो तो दादा के राज की और करना-धरना कुछ नहीं। बस हमें ही उसका पेट भरना पड़ेगा। ऐसी हालत में उसकी शादी नहीं होनी चाहिए थी।

नीमा—(कुछ सतर्क होकर) बस इतना ही जानते हो? तब तो तुम्हें कबीर के सम्बन्ध में कुछ भी पता नहीं। मुझे तो अधिक चिन्ता यह है कि वह बेदीन हो गया है—काफ़िर हो गया है। मुसलमान होने का कोई चिह्न उसके कामों से प्रकट नहीं होता। उसके ऊपर हिन्दू धर्म का असर पड़ चुका है।

नीरू—( गर्दन उठाकर ) तुमने यह कैसे जाना ?

नीमा—मैं बहुत दिनों से उसकी हरकतें देख रही हूँ। यह हर रोज़ उठकर गंगा में नहाने जाता है। वहाँ से पानी की गागर भरकर लाता है और चौका देकर रोटी खाता है। उसके मुँह से कभी अल्लाह या खुदा नहीं निकलता। जब देखो तब परमात्मा या भगवान् आदि नाम लेता सुनाई देता है। एक दिन यह भी कहता था कि मैं अपनी रोटी खुद पकाकर खाया करूँगा, लेकिन फिर इस बात का कभी ज़िक्र नहीं किया। कल मैंने उसकी बातें सुनी हैं। कहता था कि मेरी शादी तो खुदा के साथ हो गई है। मैं तो उसकी दुलहन हूँ।

( सावधान होकर ) देखना लोई से यह बात न कह देना। पराई जाई ने मेरे घर में आकर देखा ही क्या है ? और दुःखी होगी।

नीरू—( क्रोध में ) तोबा ! गज़ब खुदा का ! हमारे घर में यह काफिर कहाँ से पैदा हो गया। भला कहीं खुदा भी शादी करता है। यह तो खुदा की ज़ात पर भारी इलज़ाम है। खुदा खैर करे ! मुझे इस गुनाह का नतीजा अच्छा दिखाई नहीं देता। रोज़ा-नमाज़ छोड़कर इसने गंगा में नहाना ले लिया है। देखता हूँ कल से कैसे यह गंगा में नहाने जाता है। आज ही इसकी गगरी फोड़कर रख देता हूँ। ( जाना चाहता है )

नीमा—( रोककर ) देखना, मेरे बच्चे को कुछ न कहना। उसके अन्दर पहले ही फ़क़ीरी आई हुई है। ऐसा न हो, कहीं तुम्हारे झिड़कने से घर छोड़कर ही भाग जाए। फिर मैं किसका मुँह देखकर जीऊँगी। खुदा उसको जिन्दगी दे। मुझे तो अपना काफिर बेटा ही अच्छा। आहिस्ता-आहिस्ता अपने आप सुधर जायगा।

नीरू—तुम भोली बातें करती हो। हम अपनी बिरादरी और अपने धर्म के लोगों में कहीं भी मुँह दिखाने के लायक न रहेंगे। लोग हमें छेक देंगे और हमारे साथ खान-पान तथा रोटी-बेटी के सम्बन्ध को भी तोड़ डालेंगे। यदि बादशाह सलामत को पता लग गया तो और भी गज़ब हो जायगा। पता नहीं, हमारे लिए क्या कठोर दंड निश्चित हो जाए। गेहूँ के साथ घुन भी पिस जाता है। कबीर के साथ सारे कुटुम्ब पर भारी बवाल आ जायगा। कहीं बादशाह मौत की सज़ा देकर हमें हाथी से न कुचलवा दे, या तेली के कोल्हू में न पिलवा दे।

नीमा—( स्तब्ध होकर ) क्या यह मुमकिन है ?

नीरू—क्यों नहीं ! बादशाह इस बात को कब बरदाश्त कर सकता है कि कोई मुसलमान बेदीन हो जाय । शायद तुम्हें कानून का पता नहीं। यदि कोई मुसलमान अपने मज़हब को छोड़ता है तो उसे फाँसी की सज़ा दी जाती है। यदि कोई हिन्दू एक बार मुसलमान हो जाय तो वह भी फिर हिन्दू नहीं हो सकता । उसके लिए भी मौत का दंड है । जो आदमी किसी मुसलमान को बेदीन करता है उसके लिए भी मौत का दंड है।

नीमा—( अत्यन्त क्षीण स्वर में ) तब तो बहुत बुरा होगा । हमें इस बात को छिपाकर रखना चाहिए ।

नीरू—हम तो हज़ार कोशिश करें और किसी कोइस बात की कानोंकान भी खबर न होने दें। लेकिन यह मुल्ला और मौलवी लोग कब माननेवाले हैं । ये तो ऐसे मौकों की ही तलाश में रहते हैं । कहीं कुछ बात हो सही, ये झट बादशाह के कानों तक पहुँचा देते हैं और वहाँ बादशाह के कानों को भरनेवाले लोगों की कमी नहीं ।

नीमा—तो फिर हमें क्या करना चाहिए ?

नीरू—मेरे विचार से तो काशी को छोड़कर किसी गाँव में बस जाना चाहिए । गाँव में किसी बात को छिपाना कुछ सरल होता है ।

नीमा—मेरा भी यही विचार है। पता नहीं, कबीर मानेगा या नहीं ।

नीरू—यह तुम जानो, तुम्हारा काम ।

[ यह कहकर नीरू तेज़ी से बाहर निकल जाता है । नीरु के जाते ही साथ की कोठरी से लोई आ जाती है । ]

लोई—( पैर छूकर ) माताजी, क्या बातें हो रही थीं ?

नीमा—( बहू को गले लगाकर ) कुछ नहीं मेरी प्यारी बेटी, गृहस्थ के धन्धे ही ऐसे हैं। इनमें कोई न कोई झंझट खड़ा ही रहता है। तुम्हारे ससुर का मिज़ाज भी कुछ गर्म है, जल्दी ही जोश में आ जाते हैं।

लोई—( नम्रता से ) माताजी, आप व्यर्थ ही मुझसे छिपाने का प्रयत्न कर रही हैं। बहुत सी बातों को मैं पहले ही जानती थी और बहुत सी बातों को मैंने आज सुन लिया है। मैं इस घर में ऐसी अभागिन आई हूँ कि सारे घर की शान्ति भंग हो गई। यदि मेरी जान कुर्बान करके सारे घर के ऊपर से विपत्ति के बादल टल जायँ तो मैं अपने आपको सफल समझूँगी।

नीमा—( बहू का सिर चूमकर ) नहीं मेरी प्यारी बेटी, इसमें तेरा क्या अपराध ? मेरे अच्छे भाग उदय हुये हैं कि मुझे ऐसी बहू मिली, निरा दूध का दूध। खुदा करे कि तू दूधों नहाये और पूतों फले। कब अल्लाह तेरी गोद भरे और कब हमारे मनोरथ पूरे हों। ( कंठ रुक जाता है। )

( लोई लज्जा से सिर झुका लेती है। )

नीमा—बेटी, तुम्हारी क्या राय है ? अब हमने काशी छोड़ने का निश्चय कर लिया है।

लोई—माताजी, मेरी सम्मति का कोई महत्त्व ही नहीं। मैं उनसे इस विषय पर पहले ही बात कर चुकी हूँ। वे किसी तरह भी काशी छोड़ने के लिए तय्यार नहीं और उनके बिना मैं भी कहीं नहीं जा सकती। यदि आप कहीं और चली जायँगी तो मुझे अपनी सेवा के सौभाग्य से भी वंचित कर देंगी।

नीमा—( प्यार से, बात पलटकर ) नहीं मेरी प्यारी बेटी, हम कहीं नहीं जाते। अब काम का वक्त हो गया है। जाओ, नलियाँ भरो।

**लोई—जो आज्ञा माताजी।**

[ लोई का प्रस्थान ]

**पर्दा गिरता है**

× ——— × ——— × ——— ×

## तीसरा दृश्य

[ स्थान काशीधाम। समय प्रातःकाल। रामानन्दजी शिष्यों के साथ आश्रम में बैठे हुए कीर्तन कर रहे हैं और भी बहुत से भक्तजन बैठे हुऐ भक्ति-रस का स्वाद ले रहे हैं। ]

**रामानन्द**—आरति कीजै हनुमान लला की।
दुष्टदलन रघुनाथ कला की ॥
जाके बल भर ते महि कांपै।
रोग सोग जाकी सिमा न चांपै ॥
अंजनी सुत महा बलदायक।
साधु सन्त पर सदा सहायक ॥
बाएँ भुजा सब असुर सँहारी।
दहिन भुजा सब सन्त उबारी ॥
लछिमन धरति में मूर्छि परयो।
बैठि पताल जम कातर तोरयो ॥
आनि सजीवन प्रान उबारयो।
मही सबन कै भुजा उपारयो ॥
गाढ़ परे कपि सुमिरौं तो ही।
होहु दयाल देहु जस मोही ॥
लंका कोट समुन्दर खाई।
जात पवन सुत बार न लाई ॥
लंक प्रजारि असुर सब मारयो।
राजा राम के काज सँवारयो ॥

घंटा ताल झालरी बाजै।
जगमग जोति अवधपुर छाजै ॥
जो हनुमानजी की आरति गावै।
बसि बैकुंठ परम पद पावै ॥
लंक विधंस कियो रघुराई ।
रामानन्द आरती गाई ॥
सुर नर मुनि सब करहिं आरती।
जै जै जै हनुमान लाल की॥

[ आरती के अन्त में "जय हो पवन सुत हनुमान की" "जय हो सीता पतिराम की" इस प्रकार की महाध्वनि । ]

रविदास—(हाथ जोड़कर) गुरुदेव, आश्रम के द्वार पर एक व्यक्ति खड़ा है। उसकी वेश-भूषा मुसलमानों जैसी है, किन्तु भाव भाषा हिन्दुओं जैसी। आपसे मिलना चाहता है। मैंने कहा था कि यह गुरुदेव के कीर्तन का समय है। इस समय मिल नहीं सकोगे, कभी फिर आना। किन्तु वह द्वार से टलने का नाम नहीं लेता।

रामानन्द—( करुणापूर्ण स्वर से ) वत्स रविदास, उसे अन्दर ले आओ। पता नहीं, बेचारा मन में क्या इच्छा लेकर कितनी दूर से चलकर आया हो और कब का द्वार पर खड़ा हो। रामानन्द का द्वार प्रत्येक आगन्तुक के लिए सर्वदा खुला रहना चाहिए। जिनको हम तुच्छ और साधारण समझते हैं, उनके अन्दर भी आत्मा की अमर ज्योति जगमगाती है। जाओ, और उस व्यक्ति को आदरपूर्वक अन्दर ले आओ।

[ रविदास का प्रस्थान और कबीर के साथ पुनः प्रवेश ]

कबीर—(चरणों में गिरकर) भगवान् के प्रतिरूप गुरुदेव, आपका अनन्य भक्त और तुच्छ शिष्य कबीर बारबार प्रणाम करता है।

रामानन्द—( कबीर के मुसलमानी वेश से चकित होकर ) तुम कौन हो ? कहाँ के रहनेवाले हो ? मुझे तो याद नहीं कि मैंने तुम्हें कभी अपना शिष्य बनाया है।

कबीर—( पुनः चरण छूकर ) मेरे स्वामी, आप तो अन्तर्यामी हैं, भगवान के साक्षात प्रतिनिधि हैं। आप सब कुछ जानते हैं, किन्तु फिर भी इस सेवक के मुँह से कुछ सुनना चाहते हैं। लीजिए सुनिए। कोई चार वर्ष की बात होगी, आप मणिकर्णिका घाट पर गंगास्नान के लिए जाया करते थे। मैं एक दिन आपके आने से पहले ही अन्धकार में लेट गया। जब आप वहाँ आये तो आपके पवित्र चरण इस सेवक के अपवित्र शरीर पर पड़े और सहसा श्रीमुख से राम राम निकला। बस, मैंने उस राम नाम को ही गुरु मन्त्र समझ लिया। उस दिन से आप गुरु हैं और मैं आपका शिष्य। महाराज, सच जानिये जिस प्रकार परम पावन राम के पवित्र चरणों से अहल्या तर गई थी, ठीक उसी प्रकार आपके चरण कमलों ने इस सेवक का बेड़ा पार कर दिया है।

रामानन्द—( कुछ स्मरण करके ) अच्छा, वह तुम हो ! यद्यपि मैंने तुम्हें कभी विधिपूर्वक शिष्य नहीं बनाया तथापि आज तुम्हें अवश्य गले लगाता हूँ। ( कबीर को अंक में लेकर ) मुझे इस बात का बड़ा भारी गर्व है कि एक ऐसा सच्चा व्यक्ति मेरी शिष्य मंडली में प्रवेश कर रहा है। वह वंश धन्य है जिसमें तुम उत्पन्न हुए हो। किन्तु यह तो बताओ कि तुमने शिष्य बनने की यह अनोखी रीति कहाँ से निकाली है।

कबीर—(हाथ जोड़कर )महाराज, मेरा जन्म एक मुसलमान घर में हुआ है। मुझे डर था कि शायद गुरुदेव एक जन्म के मुसलमान को अपने धर्म की दीक्षा न देंगे। अतः मैंने यह रीति ग्रहण की थी। मैं यह जानता हूँ कि संसार में गुरु

बिना गत नहीं। अतः धोखे से आपका शिष्य बना हूँ। मुझे पूर्ण आशा है कि आप सेवक की इस धृष्टता को क्षमा करेंगे।

रामानन्द—( हँसकर ) शायद तुम रामानन्द को अभी तक ठीक-ठीक नहीं समझे। मेरा द्वार प्रत्येक सम्प्रदाय और प्रत्येक जाति के मनुष्यों के लिए सदा खुला रहता है। जिस व्यक्ति में सच्ची जिज्ञासा विद्यमान हो, हम उसे अवश्य ही दीक्षा देते हैं; क्योंकि हमारे विचार में भक्ति और सत्कर्मों में सब का समान रूप से अधिकार है। ( रविदास की ओर संकेत करके ) यह देखो मेरा शिष्य रविदास चमार जाति का है। ( सेन की ओर संकेत करके )और यह देखो सेन नाई जाति का है।

कबीर—महाराज, अभी तक तो मैं आपका वैसा ही शिष्य हूँ जैसा कि एकलव्य द्रोणाचार्यजी का था। अब आप मुझे विधिपूर्वक दीक्षा दीजिए और अपना शिष्य बनाकर मेरे हृदय की सब दुविधाओं को दूर कीजिए।

रामानन्द—पुत्र, तुम आज से मेरे शिष्य हो—प्रिय शिष्य। राम नाम ही महामन्त्र है, इसे तुम पहले ही सीख चुके हो। जिस सत्य का आविर्भाव तुम्हारे हृदय में हुआ है, उसे संसार के कोने-कोने में पहुँचा दो।

कबीर—( हाथ जोड़कर ) मेरे प्रभु, मुझे यह बताइये कि क्या मैं हिन्दू धर्म में प्रवेश कर सकता हूँ ?

रामानन्द—क्यों नहीं ? हिन्दू धर्म बड़ा विशाल है। हूण, शक और यवन जातियों के असंख्य लोग इसमें प्रविष्ट हुए। हिन्दू धर्म ने सबको गले से लगाया। आज कोई नहीं जान सकता कि भारत में हूण कौन से हैं और शक कौन से। हिन्दू धर्म गंगा की पवित्र धार के सदृश्य है। इसमें पड़कर हर एक चीज़ पवित्र

हो जाती है। बड़े-बड़े क्रूरों को विनीत बनानेवाला यही धर्म है।

कबीर—तो मुझे भी हिन्दू बना लीजिए।

रामानन्द—वत्स, तुम हिन्दू बन गये हो। जो राम का पवित्र नाम अपनी जिह्वा से उच्चारण करता है और गंगा के पवित्र जल में स्नान करता है वह हिन्दू हो जाता है। रामनाम का जप कर के असंख्य प्राणी भव सागर को पार कर गये हैं। गंगा की पवित्र धारा में लाखों मनुष्यों के पाप पुञ्ज काई की तरह बह गये हैं।

कबीर—( सहर्ष ) महाराज, आपने तो मेरे ऊपर अपार कृपा की है। मैंने तो सुना था कि हिन्दू लोग किसी दूसरे धर्म के व्यक्ति को अपने अन्दर प्रविष्ट नहीं करते, किसी का छुआ हुआ भोजन तक नहीं करते। और तो और, अपने धर्म के बहुत से लोगों के साथ भी अच्छा बर्ताव नहीं करते।

रामानन्द—पुत्र, हिन्दू धर्म अपने वास्तविक रूप में बड़ा उदार है। वेदों और शास्त्रों में प्राणिमात्र को समान दृष्टि से देखा गया है। किन्तु कुछ स्वार्थी और विद्या शून्यलोगों ने हिन्दू धर्म को संकीर्ण बना दिया है। इस प्रकार के लोग वेदों और शास्त्रों की शिक्षा से परिचित नहीं होते, अपने पूर्वजों के मार्ग को भी भली प्रकार नहीं पहचानते। देखो, कश्यप महर्षि ने मिस्र के यवनों को शुद्ध किया। राम ने भीलनी के बेर खाये और कृष्ण को विदुर का साग-पात ही अच्छा लगा।

कबीर—महाराज, मेरा भी यही विचार था कि स्वार्थी लोगों ने पवित्र हिन्दू धर्म को बदनाम कर दिया है। हिन्दू धर्म अवश्य ही प्राणि-मात्र के लिए हितकर है।

रामानन्द—कुछ काल से स्वार्थी लोगों ने हिन्दुओं में ऊँच-नीच का

भेद-भाव उत्पन्न कर दिया है। किसी को शूद्र कहकर जाति से बाहर निकाल दिया जाता है और किसी को चांडाल कह कर घृणा की दृष्टि से देखा जाता है; किन्तु यह बात ईश्वरीय नियम के विरुद्ध है। सब प्राणी भगवान् के पुत्र हैं। उसकी हवा में सब समान रूप से साँस लेते हैं। उसका बनाया हुआ सूर्य सबको प्रकाश देता है। सबके अन्दर एक ही आत्मा की ज्योति प्रदीप्त है, अतः सब बराबर हैं। हाँ, जो नीच काम करता है वह नीच है और श्रेष्ठ काम करनेवाला श्रेष्ठ है। बहुत से स्वार्थी लोगों ने देव-मन्दिरों के द्वार भी शूद्रों के लिए बन्द कर दिये हैं। कुछ विद्याभिमानी लोगों ने तो शूद्रों से वेद पढ़ने का भी अधिकार छीन लिया है और यह व्यवस्था दी है कि यदि कोई शूद्र वेद मन्त्र का उच्चारण करे तो उसकी जिह्वा कटवा देनी चाहिए तथा यदि कोई शूद्र वेद मन्त्र को सुन ले तो उसके कानों में रांगा भरवा देना चाहिए। इससे अधिक अत्याचार और क्या हो सकता है ?

कबीर—मेरे इष्टदेव, आपने तो मुझे निहाल कर दिया है। अब कृपा करके मुझे परमात्मा के स्वरूप के बारे में भी कुछ बताइये।

रामानन्द—वत्स, परमात्मा सर्वान्तर्यामी, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् है। कोई स्थान ऐसा नहीं जहाँ भगवान् विद्यमान न हो। उसकी आज्ञा से ही संसार के समस्त कार्य चल रहे हैं। यह चाँद, सूरज और तारे उसी के नियम में बंधे हुए हैं। कोई भी उसके नियमों का उल्लंघन नहीं कर सकता। वह हमारे कर्मों का यथार्थ फल देनेवाला है। उसके दरबार में पक्षपात नहीं होता और उसे कोई धोखा नहीं दे सकता।

कबीर—महाराज, क्या भगवान् कभी जन्म भी लेता है ?

रामानन्द—वत्स, शुद्ध ब्रह्म कभी जन्म नहीं लेता। वह जन्म-मरण के बन्धन से रहित है, निर्लय है। वह सारे संसार का साक्षी है, निराकार है। हाँ, माया-विशिष्ट ब्रह्म अवश्य जन्म-मरण के चक्कर में आता है। इस माया-विशिष्ट ब्रह्म को ही ईश्वर के नाम से पुकारा जाता है, यही अवतार ग्रहण करता है। ब्रह्मा, विष्णु और शिव यह तीनों नाम माया-विशिष्ट ब्रह्म के ही हैं। राम, कृष्ण और नरसिंह आदि अवतार भी उसी माया-विशिष्ट ब्रह्म के हैं। वह माया-विशिष्ट शुद्ध ब्रह्म का अंश है और साधारण जीवों से भिन्न है।

कबीर—महाराज, आपका भाव यही है न कि ईश्वर जन्म लेता है, किन्तु ब्रह्म जन्म नहीं लेता। कृपा करके यह तो बताइये कि ईश्वर को जन्म धारण करने की क्या आवश्यकता पड़ती है।

रामानन्द—पुत्र, यह माया ही सब आवश्यकताओं को उत्पन्न करनेवाली है। संसार के जीव माया के जाल में फँसकर कुमार्गगामी हो जाते हैं। उनका सुधार करने के लिए भगवान् को अवतार धारण करना पड़ता है। यदि नरसिंह अवतार न होता तो प्रह्लाद की रक्षा किस प्रकार होती; राम का अवतार न होता, तो रावण के अत्याचारों से देवों और मनुष्यों को कौन मुक्त करता; कृष्ण अवतार के बिना कंस और उसके साथियों के दानवी कुकृत्यों का अन्त किस प्रकार होता?

कबीर—महाराज, अब मुझे भगवद्भक्ति की पद्धति बताइये। भगवान् का मुख्य नाम क्या है और हमें किस प्रकार उसका जप करना चाहिए?

रामानन्द—सच्चे हृदय से भगवान् का नाम जपना ही भक्ति है।

यद्यपि भगवान् के अनन्त नाम हैं तथापि उसका मख्य नाम राम ही है। हमें राम नाम का ही जप करना चाहिए। इस नाम का जप करने से हमारे हृदय में यह प्रकाश हो जाता है कि भगवान् दुष्टों का दलन और सज्जनों का पालन करनेवाला है। जिह्वा से राम नाम रटते रहे और मन में उसके गुणों का ध्यान लगा रहे, बस यही जप की रीति है। जप का अभ्यास करते-करते मनुष्य ऐसी अवस्था को प्राप्त हो जाता है कि बिना किसी प्रयत्न और प्रेरणा के उसके मुख से स्वयं ही राम नाम निकलने लगता है। इतना ही नहीं, अपितु उसकी प्रत्येक साँस के साथ राम नाम की ध्वनि निकलती है।

कबीर—[ हाथ जोड़कर ] महाराज, मैं कृतकृत्य हुआ। आपकी अपार दया से मेरे भ्रम-बन्धन टूट गये। पता नहीं किन पुण्य कर्मों के फल से आपका चरणसेवक बना हूँ। जी तो यही चाहता है कि सदा आपके चरणों में बैठकर आप के सत्संग का लाभ प्राप्त करता रहूँ; किन्तु सांसारिक परिस्थितियों के कारण विवश हूँ। अब मुझे आज्ञा दीजिए, समय-समय पर आपके उपदेशामृत का पान करके सफल होता रहूँगा।

रामानन्द—[सहर्ष ] जाओ बेटा, अब अपना काम करो और सत्य के प्रचार में उद्योगशील रहो।

[ कबीर का प्रणाम करके प्रस्थान ]

रविदास—महाराज, यह तो आपको एक अच्छा जिज्ञासु शिष्य मिला है। यह मुसलमानों में अब तक कैसे छिपा रहा। निःसन्देह यह तो गुदड़ियों का लाल निकला।

रामानन्द—मैंने इसका नाम तो पहले भी सुना था, किन्तु उसके

सम्बन्ध में विशेष परिचय आज प्राप्त हुआ है। अच्छा पुत्र, अब सत्संग का समय समाप्त हो गया। हम स्वाध्याय के कमरे में जाते हैं।

[ रामानन्दजी के उठते ही सब सभ्यों का उठना ]

पर्दा गिरता है

× ——— × ——— × ——— ×

## चौथा दृश्य

[ स्थान काशीधाम। समय प्रातःकाल। कबीर अपने करघे पर बैठे हुए कपड़ा बुन रहे हैं और साथ ही धीमी-धीमी आवाज़ में गा रहे हैं ]

**कबीर—** झीनी झीनी बीनी चदरिया।

काहे का ताना काहे की भरनी
कौन सूत से बीनी चदरिया॥
इँगला पिंगला ताना भरनी
सुषमन सूत से बीनी चदरिया॥
षट कमल दल चरखा डोलै
पांच तत गुण तीनी चदरिया॥
साईं को सियत मास दस लागे
ठोंक ठोंककर बीनी चदरिया॥
सो चादर सुर नर मुनि ओढ़ी
ओढ़ के मैली कीनी चदरिया॥
दास कबीर जतन सो ओढ़ी
ज्यों की त्यों धर दीनी चदरिया॥
झीनी झीनी बीनी चदरिया।

( स्वगत ) अहा, कितना सुन्दर है यह संसार! जो बातें मुझे कभी स्वप्न की लीला की भाँति असम्भ प्रतीत होती थीं, आज वे सत्य हो गई हैं। मुझे कब विश्वास था कि गुरु रामानन्दजी इस तुच्छ व्यक्ति को अपनी चरण-शरण में

स्थान देंगे। अब तो कुछ दिनों से विरोधियों की भी कोई बात सुनने में नहीं आई। मालूम होता है कि सब हारकर और झक मारकर बैठ गये हैं। यदि विरोधी हों भी तो मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं? कहा भी है जिसके सिर पर साईं का हाथ होता है, उसका कोई कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता।

[ सहसा माता का प्रवेश ]

कबीर—( प्रणाम करके ) आइये माताजी, बैठिए। मैं आपको प्रभु-भक्ति के सुन्दर भजन सुनाना चाहता हूँ।

नीमा—( व्याकुलता से ) भजन तो फिर सुनुंगी, पहले मुझे यह बताओ कि क्या तुम एक हिन्दू फकीर के चेले हो गये हो?

कबीर—( सिर झुकाकर ) माताजी, श्री गुरु रामानन्दजी महाराज ने बड़ी कृपा करके मुझे अपनी शिष्य मंडली में मिला लिया है। मेरे कहाँ भाग्य थे कि मैं उनके चरणों का दास बनता। यह तो भगवान की प्रेरणा से उनके हृदय में दया आई है।

नीमा—( गम्भीर होकर ) बेटा, तुम मोमिन होकर एक हिन्दू के चेल बने हो भला। मुसलमान लोग इस बात को कब सहन करेंगे?

कबीर—माताजी, मैं धर्म के मुआमले में उदार हूँ। हिन्दू और तुर्क का भेद मुझे अच्छा नहीं लगता। मेरी दृष्टि में हिन्दू और मुसलमान एक हैं। एक ही भगवान के पुत्र हैं। किन्तु कुछ अपनी बेसमझी से और कुछ स्वार्थवश आपस में लड़-लड़कर मर रहे हैं। मैं इस हिन्दू-मुस्लिम के भेद को मिटा देना चाहता हूँ। मुझे सबसे अधिक दुःख उस समय होता है जब कि लोग भगवान

के नाम पर लड़ते हैं। राम और रहीम एक ही चीज़ तो है। पता नहीं फिर नाम के विवाद को क्यों खड़ा किया जाता है।

नीमा—बेटा, तुम्हारा यह विचार तो ठीक है। काश! हिन्दू और मुसलमान आपस में न लड़ते। इनकी लड़ाई बहुत ही छोटी-छोटी बातों पर हो जाती है। मस्जिद में बांग दी जा रही हो और मन्दिर में शंख बज जाए, तो बस समझो कि बारूद के ढेर में चिनगारी पड़ गई। हिन्दू होली खेल रहे हों और मुसलमान मुहर्रम का मातम कर रहे हों, तो लड़ाई न होनी हो तब भी हो जाए।

कबीर—माताजी, यही तो मैं चाहता हूँ कि यह धार्मिक असहिष्णुता सदा के लिए मिट जाए। संसार के सर्व-साधारण लोग आपस में लड़ना नहीं चाहते; किन्तु यह धर्म के ठेकेदार भोले-भाले लोगों को लड़ा देते हैं। जब तक जनता इन मुल्लाओं और पंडितों के जाल से मुक्त न होगी, तब तक उसे सुख और शान्ति की साँस लेना नसीब न होगा।

[ सहसा नीरू का प्रवेश ]

नीरु—( बात काटकर ) तुम सारे संसार को शान्ति दिलाने चले हो, पहले अपने आपको तो सँभालो। सारे शहर में आजकल तुम्हारी ही चर्चा हो रही है। मस्जिदों के इमाम, मुल्ला और मौलवी तुम्हारे नाम पर उधार खाए बैठे हैं।

कबीर—पिताजी, मेरे गुरु सर्वज्ञ और सर्वान्तर्यामी भगवान् के प्रतिनिधि हैं। उन्हें किसी का भी भय नहीं। रहा मैं, सो ओखली में सिर दिया तो धमाकों का क्या डर? मैं हर

तरह की मुसीबत सहने के लिए तय्यार हूँ। मैं इस मार्ग पर सिर-धड़ की बाज़ी लगाकर आया हूँ। भक्तों पर सदा कष्ट पड़ते ही आए हैं। जो कष्टों को सहन करने की क्षमता न रखता हो, उसे सत्य के प्रचार का साहस ही नहीं करना चाहिए।

नीरू—( उत्तेजित होकर ) तुम जो चाहो करो। भाड़ में जाए तुम्हारी भक्ति और चूल्हे में पड़े तुम्हारा सत्य। लेकिन सोचो तो सही, तुम्हारी इस बेलगामी से तुम्हारी बीवी पर कितनी मुसीबतें आयँगी। यह एक साल का नन्हा-सा बच्चा तुम्हारे अपराधों के कारण तरह-तरह के कष्ट उठाएगा। यदि तुम्हें हमारी चिन्ता नहीं है तो न सही, अपने बाल-बच्चों की चिन्ता तो करो। यदि ऐसा ही सत्यवादी फ़क़ीर बनना था; तो शादी के झमेले में क्यों पड़े थे? पराई जाई का जी दुखाना अच्छा नहीं।

कबीर—पिताजी, आप कोई चिन्ता न करें। जब तक भगवान् रक्षक है, किसी की क्या मजाल कि हमारा बाल भी बाँका कर सके।

[ नीरू और नीमा का प्रस्थान। कबीर अकेले रह जाते हैं। ]

कबीर—( अपने आप ) कितना जटिल है यह संसार। शास्त्रों में तो लिखा है कि वीर पुरुष परिस्थितियों पर विजय प्राप्त कर लेता है, किन्तु मुझे तो आज अनुभव हो रहा है कि परिस्थितियों की शक्ति अनन्त है। मनुष्य कुछ और चाहता है; किन्तु परिस्थितियाँ उसे कुछ और ही बना देती हैं। परिस्थितियों ने दशरथ को अपने प्रिय पुत्र राम की जुदाई में तड़प-तड़पकर प्राण देने के लिए विवश किया और परिस्थितियों ने ही भीष्म पितामह

को आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने के लिए बाधित किया। जिस मनुष्य को अनुकूल हालात मिल जाते हैं, वह संसार में सफल हो जाता है। प्रतिकूल हालात से वास्ता पड़ने पर मनुष्य का साहस, धैर्य, विद्या और बुद्धि सभी व्यर्थ हो जाते हैं। (कुछ सोच कर) मैं परिस्थितियों के सामने घुटने नहीं टेकूँगा। यदि परिस्थितियाँ मेरे सामने नहीं झुकतीं तो मैं ही उनके सामने झुककर कायर क्यों बनूँ? अब तो जीवन-नैय्या को मंझधार में डाल दिया है, चाहे लहरों के आघात से डूब जाए और चाहे खेवा पार हो जाए।

(कबीर अचेत से होकर लेट जाते हैं।)

पर्दा गिरता है

×———×———×———×

## पाँचवाँ दृश्य

[स्थान काशीधाम। समय प्रातःकाल। ईलो एक नन्हे बच्चेको गोद में लिये बैठी है। चिन्ता की मलिन और क्षीण रेखा उसके चेहरे से प्रकट हो रही है।]

लोई—(आप ही आप) मैंने अपनी इच्छा से अपने पति को चुना था, केवल उनके गुणों पर रीझकर। किन्तु अब मुझे पता लगा कि संसार में गुणों का कुछ भी मूल्य नहीं। संसार का ढंग ही कुछ निराला है। चालाक, मक्कार और बेईमान लोग मजे से जिन्दगी गुजार रहे हैं। इसके विपरीत सत्य का व्रत धारण करनेवाले सज्जन स्थान-स्थान पर ठुकराए जाते हैं। गुणवान और बुद्धिमान लोग निरक्षर और मूढ़ धनिकों के सामने हाथ बाँधे खड़े रहते हैं। धनिक लोग चाँदी के ठीकरों के बदले दूसरों का ईमान, धर्म सब कुछ खरीद सकते हैं। मेरे पति सत्यनिष्ठ और सदाचारी महा-

चिन्तामग्न लोई

पुरुष हैं। यदि संसार की बुनियादें सत्य पर आश्रित होतीं, तो आज संसार में मुझसे अधिक सुखी कोई भी स्त्री न होती। किन्तु आज का संसार मिथ्या है, निरा दिखावा है, इसलिए संसार में आज मुझसे दुखिया कोई भी नहीं। (पुत्र का मुख चूमकर) मेरे जिगर के टुकड़े! मुझे रह-रहकर तुम्हारा ध्यान आता है। तुमने संसार में आकर अभी तक कुछ भी नहीं देखा और मालूम नहीं मुसीबतों का कौन सा पहाड़ तुम्हारे ऊपर टूट पड़े। (गहरी साँस लेकर) मेरी आशाओं के सार, मेरे बच्चे! कुछ हो, मैं अपनी जान पर खेल जाऊँगी, लेकिन तुम्हें आँच तक न आने दूँगी। (आँसुओं की कुछ बूँदें उसके कपोलों पर गिरती हैं।)

[ दबे पाँव कबीर का अन्दर प्रवेश ]

लोई—(झट आँसू पोंछकर) आइये प्राणनाथ।

कबीर—प्राणेश्वरी, क्या सोच रही हो? यही न कि एक निखट्टू और निकम्मे जीवन-संगी से पाला पड़ गया है।

लोई—नहीं, प्राणनाथ। भला, यह क्यों सोचने लगी। मेरा हृदयेश्वर संसार का रत्न है, संसार चाहे उसके मूल्य को आँके या न आँके।

कबीर—(गद्गद स्वर से) मैं धन्य हूँ जिसे ऐसी जीवन-संगिनी मिली है। वनखंडी बाबा की पुत्री से यही आशा की जा सकती है। लोई, सुनो! यह संसार नश्वर है, इसके सुख और दुःख सभी क्षण-भंगुर हैं। वे मनुष्य धन्य हैं जो सांसारिक सुखों के प्रलोभन में पड़कर अपने परलोक को नहीं बिगाड़ते।

लोई—महाराज, यह सब कुछ सत्य है; किन्तु दुःखों की भी कोई अवधि होनी चाहिए। जीवन का तन्तु आशा के सहारे

पर अटका हुआ रहता है। यदि मनुष्य बिलकुल निराश हो जाय तो यह जीवन दूभर हो जाता है।

कबीर—प्रिये, यदि तुम अधिक गम्भीरता से जीवन का अध्ययन करोगी, तो पता चलेगा कि जीवन का सुख आशा में नहीं, अपितु निराशा में सन्निहित है। आशा मनुष्य को बेचैन रखती है और निराशा उसे व्यर्थ की दौड़धूप से बचा देती है। भाग्य की रेखा मिट नहीं सकती। जो कुछ सुख-दुःख भाग्य में बदा है, वह अवश्य भोगना पड़ेगा। श्रेष्ठ वह मनुष्य है, जो आशा का महल तय्यार न करे, अपितु हर एक बात में भगवान् की इच्छा की प्रतीक्षा करे। जो मनुष्य अपनी इच्छा का समन्वय उस महा-इच्छा से कर लेता है, बस केवल वही सुखिया होता है।

लोई—महाराज, मेरे भगवान् तो आप हैं। मैंने तो अपनी इच्छाओं का समन्वय आपकी इच्छा के साथ कर लिया है। बस, मैं तो रात-दिन यही मनाती हूँ कि हमारी जिन्दगी तो अच्छी बुरी जैसी हो, कट ही जायगी। भगवान् इस बच्चे को सुख का जीवन प्रदान करें। इसी से हमारी आत्मा ठंढी होगी।

कबीर—प्रिये! वह भगवान् सबकी सुध लेनेवाला है। कोई चिन्ता न करो। चलो गंगा के किनारे चलकर कुछ देर के लिए मन बहला आवें।

[ दोनों का प्रस्थान ]

---

# दूसरा अङ्क

## पहला दृश्य

[ स्थान मानिकपुर। समय मध्याह्नोत्तर। शेख तकी अपने डेरे में बैठे हैं और साथ ही शिष्य मंडली बैठी हुई है।]

तकी—[ अपने शिष्यों से ] इस्लाम ही दुनिया में सच्चा दीन है। यही खुदा का दीन है। मुहम्मद साहब आखिरी पैग़म्बर हुए हैं। आपसे पहले खुदा ने बहुत से पैग़म्बर भेजे, लेकिन अब किसी पैग़म्बर के भेजने की ज़रूरत नहीं। कुरान शरीफ़ खुदा की तरफ से उतरनेवाली किताबों में आखिरी किताब है। इससे पहले बाईबिल, तोरेत और इंजील आदि बहुत सी पुस्तकें समय-समय पर खुदा की तरफ से उतरीं, उन किताबों में सच्चाई का थोड़ा अंश ही प्रकट हुआ था; लेकिन कुरान शरीफ में सच्चाई का पूर्ण रूप प्रकट हो गया है। अतः अब न किसी नई खुदाई किताब की ज़रूरत है और न किसी नए पैग़म्बर की। इसीलिए इस्लाम सब धर्मों से सच्चा है।

एक सभ्य—पीर व मुर्शिद! अगर इजाज़त हो तो कुछ पूछूँ।

तकी—हाँ, ज़रूर पूछो।

सभ्य—जब खुदा ने पहले बहुत सी किताबें भेजीं तो उनमें सारी सच्चाई को क्यों प्रकट नहीं कर दिया? यदि खुदा ने पहली पुस्तकों में सच्चाई के पूर्ण रूप को प्रकट नहीं किया तो इसका क्या प्रमाण है कि कुरान में सच्चाई का पूर्ण रूप आ गया है? असल बात तो यह है कि यहूदी

कहते हैं कि हमारी पुस्तक में सच्चाई का पूर्ण रूप प्रकट हुआ है। ईसाई कहते हैं कि सच्चाई का पूर्ण रूप केवल हमारी ही पुस्तक में प्रकट हुआ है। इसी प्रकार आपने कह दिया कि सच्चाई का पूर्ण रूप हमारी पुस्तक में प्रकट हो गया है। सच तो यह है कि सच्चाई अनन्त है। किसी एक पुस्तक में उसका पूर्ण रूप प्रकट नहीं हो सकता। किसी एक पुस्तक को सारी सचाई का स्रोत समझना संकीर्णता के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं। हमें जहाँ से भी मिले सच्चाई को ग्रहण कर लेना चाहिए। विज्ञान ने हज़ारों नई नई बातों की खोज की है, जिनका इन मज़हबी किताबों में कहीं निशान भी नहीं। अतः हमें उदार होना चाहिए।

तक़ी—( आवेश में ) तू काफ़िर है। तेरी बात का जवाब जबान से नहीं, बल्कि तलवार की धार से दिया जा सकता है। तेरी भलाई इसी में है कि तू यहाँ से निकल जा।

[ सारी गोष्ठी में सन्नाटा। सभ्य निकल जाता है। ]

तक़ी— (क्रोध से काँपते हुए ) तुम लोग मेरी नर्मी का नाजायज़ फ़ायदा उठाते हो। अब इस क़िस्म के सवाल करनेवाले को मुआफ़ नहीं किया जायगा।

[ ठीक है, ठीक है की आवाज़ ]

एक शिष्य—हुज़ूर! मैं बहुत दिन से इस आदमी को जानता हूँ, पहले तो यह हमसे ऐसे ही बेहूदा सवाल पूछा करता था, लेकिन आज इसने आपके सामने भी गुस्ताख़ी की है। अच्छा हुआ कि आपने मौक़े पर ही उसको सँभाल लिया।

तक़ी—हम ऐसे लोगों को पहले ही ताड़ लेते हैं।

शिष्य—( हाथ जोड़कर ) महाराज, आज तो मैं भी कुछ पूछना चाहता हूँ।

तक़ी—पूछो।

शिष्य—जनाब, यह बताइये कि यह सूफ़ी मत कब, कैसे और कहाँ प्रचलित हुआ।

तक़ी—( दाढ़ी पर हाथ फेरकर ) सूफी मत को चले कम से कम तीन सौ वर्ष अवश्य हो गये हैं। सबसे पहले इस मत का प्रादुर्भाव ईरान देश में हुआ। यह बताना अत्यन्त कठिन ही नहीं, अपितु असम्भव है कि सूफी मत का चलानेवाला कौन है और किन हालात में यह मत प्रकट हुआ। सच तो यह है कि सूफी मत का चलानेवाला कोई एक आचार्य नहीं। फकीरों की जमाअत ने ही इस मत को चलाया है।

दूसरा शिष्य—अच्छा हुज़ूर, यह तो बताइये कि सूफी किसे कहते हैं। इस नाम की क्या असलियत है ?

तक़ी—इस बात का भी अभी तक ठीक-ठीक निश्चय नहीं हो सका कि सूफी नाम की असलियत क्या है, लेकिन अधिक लोग यही मानते हैं कि सूफ़ी भेड़ आदि की ऊन को पहनते हैं और ऊन का कम्बल आदि ओढ़नेवाले फक़ीरों को सूफी कहते हैं। ईरान में बहुत से फक़ीर इस प्रकार के पाये जाते थे, जो कि सारे साल ऊन के अतिरिक्त और कुछ नहीं पहनते थे। हिन्दुस्तान में भी कोई-कोई फक़ीर इस तरह का मिल जाता है।

तीसरा शिष्य—क्या सूफी मत के वही सिद्धान्त हैं जो कि इस्लाम के हैं ?

तक़ी—क्यों नहीं। सूफी मत इस्लाम की ही शाखा है। जिस प्रकार शीआ, सुन्नी, वहाबी आदि इस्लाम के कई सम्प्रदाय हैं, उसी प्रकार सूफी मत भी इस्लाम की एक शाखा है। इस्लाम की इन सब शाखाओं के मौलिक सिद्धान्त समान

हैं, किन्तु साधारण सिद्धान्तों में कुछ भेद होना स्वाभाविक ही है। यथा, सूफी लोग नमाज़, रोज़ा और हज के अधिक पाबन्द नहीं। उनके विचार में नमाज़ और रोज़ा आदि धर्म के बाह्य चिह्न हैं, अतः सब आडम्बर हैं। और सूफी किसी प्रकार के आडम्बर में विश्वास नहीं रखते।

पहला—फिर तो सूफी मत का इस्लाम से मौलिक मतभेद है। इस्लाम की तो बुनियाद ही रोज़ा और नमाज़ आदि पर है।

तक़ी—आप चाहे इसे मौलिक मतभेद कहें, किन्तु सूफी लोग इसको मौलिक भेद मानने के लिए तय्यार नहीं। उनके विचार में तौहीद (एकेश्वरवाद) ही इस्लाम का मौलिक सिद्धान्त है जिसे सूफी पूर्णतया मानते हैं।

तीसरा शिष्य—महाराज, आप अपने विषय को चालू रखिए और सूफी मत के अन्य सिद्धान्तों पर भी प्रकाश डालिए।

तक़ी—सूफी लोग तोबा के सिद्धान्त में भी विश्वास नहीं रखते। हमारे विचार में पाप का थोड़ा बहुत फल अवश्य भोगना पड़ता है, पाप केवल तोबा करने से मुआफ नहीं हो सकता। सूफी मत में खुदा के अतिरिक्त और किसी सत्ता को स्वीकार नहीं किया गया। यह सारा संसार खुदा से निकला है और उसी में समा जायगा। इन्सान की जिन्दगी का अन्तिम उद्देश्य यही है कि वह अपने खालिक़ का दीदार हासिल करे और मरने के बाद उसी में मिल जाए।

दूसरा शिष्य—क्या यह सिद्धान्त इस्लाम के अनुकूल है?

तक़ी—यह फैसला आप करें। हमारे विचार में तो यही सिद्धान्त इस्लाम का है, किन्तु इस्लाम की अन्य शाखाओं ने इसे पूर्णतया नहीं समझा। इस्लाम में जीव और प्रकृति के बारे में कोई विशेष उल्लेख नहीं। प्रकृति के बारे में तो कुरान शरीफ में कहीं संकेत भी नहीं। जीव के बारे में अवश्य सवाल

उठाया है जिसका उत्तर कुरान शरीफ में यही दिया गया है कि "जीव खुदा का हुक्म है, इससे अधिक तुम्हें कुछ नहीं बताया जा सकता।" इससे सिद्ध है कि .कुरान शरीफ में जीव और प्रकृति की पृथक् सत्ता को स्वीकार नहीं किया गया। बस, यही हम मानते हैं। दूसरे मुसलमानों में और सूफियों में यही भेद है कि दूसरे मुसलमान, संसार का आविर्भाव तो .खुदा से मानते हैं, लेकिन खुदा में लय नहीं मानते। हम सूफी लोग संसार का लय भी खुदा में ही मानते हैं। हमारे .खयाल में सूफी मत में ही इस्लाम की सच्ची तस्वीर पेश की गई है।

हला शिष्य—सूफी मत में भक्ति की क्या प्रक्रिया है ?

की—इबादत के बारे में सूफी मत ने बहुत कुछ स्वतन्त्रता से काम लिया है। रोज़ा, नमाज़ और तसबीह आदि की आवश्यकता तो सूफी मत ने पहले ही नहीं समझी। केवल प्रेम ही हमारी भक्ति का मुख्य आधार है। संसार की प्रत्येक सुन्दर वस्तु अपने कर्त्ता की याद दिलाती है। इसलिए हम सूफी लोग संसार के सुन्दर व्यक्तियों में खुदा के नूर को देखते हैं।

सरा शिष्य—पुनर्जन्म के बारे में आपकी क्या राय है ?

की—मैं पुनर्जन्म के सिद्धान्त को नहीं मानता। कुरान शरीफ में पुनर्जन्म को नहीं माना गया। कर्म का सिद्धान्त और पुनर्जन्म का सिद्धान्त दोनों एक दूसरे पर आश्रित हैं और ये दोनों ही सिद्धान्त कुरान में स्पष्ट रूप से नहीं माने गये। कुछ सूफी लोगों ने दबी हुई ज़बान में पुनर्जन्म के सिद्धान्त को स्वीकार किया है। मेरे विचार में यह .कुरानशरीफ की शिक्षा की अवहेलना है। पारसी धर्म के प्रभाव से ईरान

के कुछ सूफियों ने पुनर्जन्म के सिद्धान्त को मान लिया है। हमारे लिए केवल वे ही बातें ग्राह्य होनी चाहिए जिनका विधान कुरान शरीफ में किया गया है।

[ वर्षा आरम्भ हो जाती है। लोग इधर-उधर घुस जाते हैं। ]

पर्दा गिरता है।

× ——— × ——— × ——— ×

## दूसरा दृश्य

( स्थान मानिकपुर। समय प्रातःकाल। कबीरदासजी सन्तों की तलाश में घूमते-फिरते वहाँ जा निकलते हैं, और एक बाग में डेरा डालकर लोगों को उपदेश देना आरम्भ कर देते हैं। )

कबीर—मेरे प्यारे हिन्दू और मुसलमान भाइयो! धर्म कोई संकीर्ण वस्तु नहीं। यह एक विशाल चीज़ है। इसके द्वारा हम कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य, सत्य और असत्य तथा पाप और पुण्य में विवेक कर सकते हैं। स्वार्थी लोगों ने केवल आडम्बर को ही धर्म मान लिया है। हिन्दू लोग तिलक, छाप, कंठी और माला को धर्म का सर्वस्व समझते हैं। एकादशी व्रत और मूर्त्तिपूजा आदि कार्यों को अपना परम कर्त्तव्य मानते हैं। किसी के हाथ की छुई हुई रोटी नहीं खाते। भगवान् के अमृत पुत्रों को शूद्र और चांडाल कहकर घृणा की दृष्टि से देखते हैं। इस प्रकार के लोगों का कभी कल्याण नहीं हो सकता। मुसलमान लोग अल्लाह को सुनाने के लिए ज़ोर-ज़ोर से बांग देते हैं। उन्हें पता नहीं कि चींटी के पर में यदि नेवर बजे तो उसकी आवाज़ को भी भगवान् सुन लेता है। उस भगवान् को प्रसन्न करने के लिए रोज़े रखते हैं किन्तु ईद के दिन गाय, बकरी आदि उपयोगी पशुओं को

मारकर खा जाते हैं। बंदगीऔर कुर्बानी का कोई सम्बन्ध नहीं। भगवान् हिंसा से कभी प्रसन्न नहीं हो सकता। हम अपने पेट के कबरिस्तान को भरने के लिए इन बेगुनाह जानवरों को मारते हैं; किन्तु बहाना बनाते हैं भगवान् की प्रसन्नता का। इससे अधिक निर्लज्जता और धृष्टता की कोई बात नहीं हो सकती। मुसलमान लोग सगे सम्बन्धियों के साथ विवाह कर लेते हैं। खाला और चाचा तक की बेटी को ब्याह लेते हैं। इससे अधिक घृणित कार्य और क्या हो सकता है ?

[ सभा के लोगों में जोश और हलचल ]

कबीर—( शान्त भाव से ) आप शान्तिपूर्वक बैठकर मेरे विचारों को सुनिए। मैं आपको प्रश्न करने का मौका दूँगा और आपके विचारों को ध्यान से सुनूँगा। फिर जो बात सच्ची होगी, उसे मान लिया जायगा।

[ सभा में फिर गड़बड़। कुछ लोगों ने कबीर को अपशब्द कहे। कुछ लोग उठकर चले गये। ]

एक सभ्य—तो क्या आपके विचार में एकादशी आदि व्रतों का कुछ भी महात्तम नहीं ?

कबीर—[ गंभीरता से ] नहीं, यह सब चीजें निष्फल हैं। जिस दिन अजीर्ण हो, उस दिन भोजन न करना अच्छा है। किन्तु किसी विशेष देवता को प्रसन्त करने के लिए भूखे होने पर भी भोजन न करना ठीक नहीं। भूखे रहने का नाम व्रत नहीं। सत्य बोलने का व्रत धारण करो। सदाचारी रहने का व्रत लो। ये व्रत हैं। प्रतिज्ञा करके दृढ़ता और निश्चयपूर्वक किसी अच्छे काम को करना व्रत कहलाता है।

दूसरा सभ्य—क्या आप मूर्त्तिपूजा में भी विश्वास नहीं रखते ?

कबीर—नहीं; क्योंकि मेरे विचार में तो—

पत्थर पूजे हर मिले, हम लें पूज पहाड़ ।
इससे तो चक्की भली, पीस खाय संसार ॥

हम स्वयं इन मूर्त्तियों को बनाते हैं और फिर इनके सामने हाथ जोड़कर मिन्नतें माँगते हैं। इससे अधिक बेसमझी और क्या होगी ?

दूसरा सभ्य—हम मूर्त्तियों की पूजा नहीं करते, अपितु मूर्त्तियों में जो भगवान् है उसकी पूजा करते हैं। सर्वव्यापक भगवान् की पूजा के लिए कोई न कोई स्थान तो अवश्य ही निश्चित करना पड़ता है।

कबीर—भोले भाई ! यह ठीक है कि भगवान् सर्वव्यापक है; मूर्त्ति में भी विद्यमान है। किन्तु उसकी पूजा करनेवाला जीव मूर्त्ति में नहीं। भगवान् की पूजा और प्राप्ति के लिए सबसे अच्छा स्थान वह हो सकता है, जहाँ आत्मा और परमात्मा दोनों विद्यमान हों। ऐसा स्थान हृदय के अतिरिक्त और कोई नहीं। सर्वव्यापक परमात्मा भी हृदय की गुफा में विद्यमान है और एकदेशी आत्मा भी वहीं है। अतः हृदय में ही भगवान् का ध्यान करना चाहिए, यही सच्ची पूजा है और यही सच्ची भक्ति है। कहा भी है—

तेरा साईं तुझमें बसे ज्यूं पुहुपन में बास।
कस्तूरी का मृग ज्यूं फिर-फिर ढूंढ़े घास ॥

तीसरा सभ्य—तो क्या आप रोज़ा और नमाज़ को भी व्यर्थ समझते हैं ?

कबीर—रोज़े तो व्यर्थ हैं ही। न केवल व्यर्थ, अपितु हानिकारक भी। समय का उल्लंघन करके किया हुआ भोजन लाभ के स्थान पर हानि पहुँचाता है। नमाज़ स्वयं इतनी बुरी नहीं ;

किन्तु बहिश्त के लिए नमाज़ पढ़ना सही नहीं। मुसलमान लोग नमाज़ केवल इसलिए पढ़ते हैं कि उन्हें बहिश्त में जगह मिले और वहाँ भोग-विलास के लिए हूरें मिलें। इससे निकृष्ट उद्देश्य और क्या हो सकता है ? दूसरी बात यह है कि नमाज़ में प्रभु का ध्यान नहीं किया जा सकता, यह तो केवल जप मात्र है।

चौथा सभ्य—हज के बारे में आपकी क्या राय है ?

कबीर—यदि इसे एक सत्संग का साधन समझा जाए तो ठीक है। किन्तु मुसलमान समझते हैं कि हज करने से सारे पाप छूट जाते हैं, यह बात सर्वथा असंगत है। एक बात और भी है, मुसलमान लोग काबे को ख़ुदा का घर समझते हैं और हाजी लोग अपने आपको ख़ुदा का महमान बताते हैं। सर्व-व्यापक भगवान् का कोई घर नहीं हो सकता, वह पत्ते-पत्ते में रमा हुआ है।

पाँचवाँ सभ्य—हमारे शहर में एक फ़क़ीर रहते हैं जिनका नाम शेख़ तक़ी है। हम उन्हें अपना पीर समझते हैं। हमारी इच्छा है कि उनके साथ आपका वार्तालाप हो ता कि जिज्ञासुओं को लाभ हो सके।

कबीर—मैं इसके लिए सदा तय्यार हूँ। सत्य और असत्य के निर्णय के लिए यह मार्ग सबसे उपयोगी है। इसका प्रबन्ध तुम करो और जहाँ चाहो, मुझे बुला लो। बस, आज के सत्संग का समय हो चुका।

[ सभा विसर्जित ]

पर्दा गिरता है।

× ——— × ——— × ——— ×

## तीसरा दृश्य

[ स्थान मानिकपुर । समय मध्याह्नोत्तर । शेख तक़ी का डेरा । सहसा एक व्यक्ति का प्रवेश । ]

व्यक्ति—पीरजी महाराज, कल से यहाँ एक फक़ीर आया हुआ है जिसका नाम कबीर है । वह कहता है कि न मैं हिन्दू हूँ और न मुसलमान, मैं तो दोनों को एक करने के लिए आया हूँ । उसकी बहुत सी बातें तो अच्छी हैं । यथा, वह मूर्त्ति पूजा को नहीं मानता । तिलक के भी खिलाफ है । किन्तु साथ ही रोज़ा, नमाज़ और हज का भी खंडन करता है ।

तक़ी—तो फिर वह कोई सूफी फक़ीर होगा, क्योंकि बहुत से सूफी रोज़ा, नमाज़ और हज को अनावश्यक समझते हैं ।

व्यक्ति—हुज़ूर, वह तो कुर्बानी को भी नहीं मानता । खुदा को सातवें आसमान पर भी नहीं मानता । मुसलमानों के बहुत से रीति-रिवाजों का उपहास करता है ।

तक़ी—फिर तो वह अवश्य कोई सन्दिग्ध व्यक्ति है ।

व्यक्ति—महाराज, हमारी राय है कि आपके साथ उसका वाद-विवाद हो जाय । यदि आपने उसका मुँह तोड़ जवाब न दिया, तो वह अवश्य बहुत से भोले-भाले मुसलमानों को बेदीन करने में सफल हो जायगा ।

तक़ी—हम इसके लिए तय्यार हैं । तुम प्रबन्ध करो । उसको ऐसा मुँह तोड़ जवाब दिया जायगा कि फिर कभी उधर का रुख ही न करे ।

व्यक्ति—बहुत अच्छा, मैं सारे शहर में मुनादी करवा देता हूँ । कल चार बजे मध्या ह्नोत्तर का समय रहा ।

[व्यक्ति का प्रस्थान]

पर्दा गिरता है ।

× ——— × ——— × ——— ×

## चौथा दृश्य

[ स्थान मानिकपुर। समय मध्याह्नान्तर हज़ूरी बाग में लोगों का जमाव। ठीक समय पर शेख तक़ी और सन्त कबीर भी आ गये। शहर के काज़ी को सभापति बनाया गया। निश्चय के अनुसार पहले कबीर साहब के प्रश्न और तक़ी के उत्तर। ]

काज़ी—[ सभापति के रूप में ] भाइयो, आज का दिन बड़ा ही सुहावना है कि हम दो बड़े फक़ीरों का विचार सुनने के लिए इकट्ठे हो रहे हैं। आपसे यही प्रार्थना है कि चुपचाप सुनते रहें और किसी प्रकार का शोर न करें। ( कबीर की ओर देखकर ) आइये सन्तजी, अपना बयान आरम्भ कीजिए।

कबीर—शेख साहब, यह बताइए कि खुदा कहाँ रहता है ?

तक़ी—खुदा सातवें आसमान पर रहता है।

कबीर—वह निराकार और सर्वव्यापक ब्रह्म एकदेशी कैसे हो सकता है ?

तक़ी—सभी धर्मों में खुदा के लिए कोई न कोई निश्चित स्थान माना गया है। हिन्दू लोग खुदा को कैलाश पर्वत पर या क्षीर सागर में मानते हैं। ईसाई चौथे आसमान पर मानते हैं और हम सातवें आसमान पर मानते हैं।

कबीर—सब धर्मों की बात रहने दें, जो कुछ आप मानते हैं उसी का समर्थन कीजिए ?

तक़ी—हम तो यही मानते हैं कि सातवें आसमान पर एक तख़्त है जिसको चार फरिश्ते उठाये हुए हैं। उस तख़्त पर एक कुर्सी है। उस कुर्सी पर खुदा बैठा हुआ है।

कबीर—आप यह तो सोचिए कि जब परमात्मा का कोई शरीर नहीं तो उसको तख़्त पर कैसे बिठा दिया। परमात्मा

निराकार है, सर्वव्यापक और सर्वज्ञ है। वह तो संसार के ज़र्रे-ज़र्रे में रमा हुआ है। कोई स्थान उससे खाली नहीं। यदि परमात्मा तख्त पर है तो उसका शरीर होगा और शरीर का धर्म नष्ट होना है तो खुदा कभी मरता भी होगा। भोजन भी करता होगा और पानी भी पीता होगा। हाँ, यह भी बताइए कि सात आसमान कहाँ से आ गये। आसमान या आकाश खाली स्थान को कहते हैं। वास्तव में इसकी कोई हस्ती नहीं। फिर सात आसमान मानना क्योंकर बुद्धि-संगत हो सकता है। सातवें आसमान पर बैठा हुआ खुदा सारे संसार की देख-रेख किस प्रकार कर सकता है?

तक़ी—हम इन बातों पर तर्क से विचार नहीं करते। हमारे मज़हब में अक़्ल को दख़ल नहीं। जो कुछ हमारे पूर्वज मानते आए हैं, हम उन्हीं बातों को मानते हैं। इसलिए आपसे प्रार्थना है कि इस विषय पर अधिक ज़ोर न दें और किसी दूसरे विषय पर वार्त्तालाप आरम्भ करें।

कबीर—अच्छा सूफ़ीजी, यह तो बताइए कि आप कुर्बानी को ठीक समझते हैं या नहीं?

तक़ी—हाँ, मैं कुर्बानी को भगवान की प्रसन्नता का साधन समझता हूँ। हमारे पैग़म्बर इब्राहीम ने खुदा को खुश करने के लिए कुर्बानी के रिवाज को चलाया था।

कबीर—हज़रत इब्राहीम की बात आप छोड़ दीजिए। उन्होंने तो अपने बेटे की कुर्बानी देने का निश्चय किया था। क्या आज कोई मुसलमान अपनी या अपने बेटे की कुर्बानी देने के लिए तय्यार है? प्रश्न तो यह है कि क्या खुदा इन बेगुनाह जानवरों की गर्दन काटने से खुश होता है? हैवान भी इन्सानों की तरह परमात्मा के पुत्र हैं। वे भी परमात्मा को

ऐसे ही प्यारे हैं जैसे कि इन्सान। देखिए कितना अत्याचार है कि मनुष्य पाप तो करे खुद और उस पाप को क्षमा कराने के लिए एक भोले-भाले जानवर को कुर्बान करदे। इससे तो उलटा एक और पाप लग जाता है।

तक़ी—हमारे धर्मग्रन्थों में इसका विधान है। इसलिए हमें कुर्बानी देनी ही पड़ती है।

कबीर—परमात्मा ने कुर्बानी को माँगा तो अवश्य है। धर्मग्रन्थों में इसका विधान भी है; किन्तु आप लोग कुर्बानी का मतलब ग़लत लेते हैं। तपस्या के जीवन को कुर्बानी का जीवन कहते हैं। मन को मारना चाहिए। काम, क्रोध, लोभ और मोह की गर्दन पर छुरी चलानी चाहिए। खुदी को मिटा देना चाहिए। अपनी कामनाओं को भगवान् के चरणों पर न्योछावर कर देना चाहिए। यही कुर्बानी है। भोले-भाले जानवरों को मारना महा पाप है। यदि मुसलमान गाय की कुर्बानी बन्द कर दें तो आज ही हिन्दुओं और मुसलमानों में एकता हो सकती है। मुसलमानों के धर्मग्रन्थों में कहीं भी गाय की कुर्बानी का स्पष्ट विधान नहीं। मुसलमान लोग केवल हिन्दुओं को चिढ़ाने के लिए गाय की कुर्बानी करते हैं। ईद के मौके पर तो कुर्बानी की गाय को सजाकर बाज़ारों में निकालते हैं। भला फिर यह आए दिन की लड़ाइयाँ क्यों न हों। क्या आप कहीं गाय की कुर्बानी का विधान दिखा सकते हैं?

[ सारी सभा में सन्नाटा। शेख तक़ी का रंग फक़ हो गया। ]

काज़ी—यह विषय बहुत नाज़ुक है, ऐसा न हो कि कहीं शान्ति भंग हो जाए। इसलिए मैं वक्ताओं से प्रार्थना करता हूँ कि वे इस विषय को छोड़कर किसी अन्य विषय पर वार्त्तालाप करें।

कबीर—मेरी तो यही इच्छा थी कि इस गम्भीर विषय पर और भी अधिक प्रकाश डाला जाता। किन्तु यदि सभापति महोदय की सम्मति इसको बन्द कर देने की हो तो मुझे कोई आपत्ति नहीं। अच्छा, तो सूफी साहब कुछ इबादत के बारे में फरमाइये ?

तक़ी—हमारी इबादत का मुख्य आधार प्रेम है। सूफी लोग संसार की सुन्दर वस्तुओं से प्रेम का उपदेश देते हैं, क्योंकि संसार की प्रत्येक सुन्दर वस्तु खुदा की प्रतिनिधि है। सौन्दर्य ही सत्य है और सत्य ही सौन्दर्य है।

कबीर—इस बात को मानने में तो किसी को इनकार नहीं हो सकता कि भगवान् सत्य शिव और सुन्दर है। किन्तु सूफी लोगों ने सदा इस सौन्दर्य का दुरुपयोग किया है। बहुत से सूफी अप्राकृतिक प्रेम का शिकार हुए। बहुत से सूफियों ने खुल्लमखुल्ला शराब पीने का समर्थन किया। सच तो यह है कि सूफियों के वचन और कर्म में आकाशपाताल का अन्तर है। वे क्रिया और निष्ठा से हीन होते हैं। रोज़ा और नमाज़ आदि को तो आडम्बर कहकर टाल दिया; किन्तु वास्तविक भक्ति का रंग भी उन पर न चढ़ सका। करनी और कथनी के इस अन्तर के कारण ही, सूफी मत एक जाल है, लोगों को इससे बचना चाहिए।

[ सभा में गड़बड़। स्वार्थी लोगों ने गाली, ईंट और पत्थर से सन्त कबीर का स्वागत किया। किन्तु समझदार लोगों पर उनका प्रभाव बैठ गया। काज़ी ने बिगड़ी हुई अवस्था को देखकर सभा विसर्जित कर दी। ]

पर्दा गिरता है

× ——— × ——— × ——— ×

# तीसरा अङ्क

## पहला दृश्य

[ स्थान काशीधाम। समय सायंकाल। गंगा के किनारे दुर्गा घाट पर कुछ व्यक्ति इकट्ठे हो रहे हैं। ]।

एक व्यक्ति—कहो भई दुर्गादत्त! कुछ कबीर के बारे में भी सुना है?

दुर्गादत्त—हाँ, उनके बारे में तो बड़ी-बड़ी विचित्र घटनाएँ सुनने में आ रही हैं। बड़े आश्चर्य की बात तो यह है कि रामानन्दजी ने उन्हें अपना शिष्य बना लिया है।

तीसरा व्यक्ति—भई, घोर कलयुग आ गया है। रामानन्दजी को धर्म-कर्म और जात-पाँत का कुछ ख़याल हो नहीं रहा। उन्होंने वर्णाश्रम धर्म की मर्यादा को बिलकुल नष्ट कर दिया है। न हिन्दू को देखें और न मुसलमान को, न ब्राह्मण को देखें और न चांडाल को। बस, जो आ जाए उसी को गुरु-मन्त्र दे देते हैं।

चौथा व्यक्ति—भई गंगादत्त! तुम भी पुराने ढर्रे के आदमी हो। भला जो श्रद्धाभक्ति से अपने पास आए, उसको दीक्षा क्यों न दी जाए?

गंगादत्त—कभी आज तक ऐसा हुआ भी ग रिजाप्रसाद! प्राचीन काल में गुरु लोग शिष्य की पूरी परीक्षा लेकर और उसके गोत्र आदि को जानकर फिर दीक्षा देते थे।

गिरिजाप्रसाद—हुआ क्यों नहीं। कश्यप ऋषि ने मिस्र के यवनों को दीक्षा दी थी। अब यह समय नहीं रहा कि कुल

और गोत्र की खोज की जाए। अब तो सच्चे सेवकों की आवश्यकता है।

दुर्गादत्त—इसमें में तो हमें कोई आपत्ति नहीं, किन्तु एक बात अवश्य खटकती है कि यह कबीर नए पन्थ का बखेड़ा खड़ा कर रहे हैं।

गिरिजाप्रसाद—नहीं, मैंने तो सुना है कि वे सब धर्मों और सम्प्रदायों के झगड़े को मिटा देना चाहते हैं।

दुर्गादत्त—मिटायँगे कैसे ? मुझे पता चला है कि मानिकपुर में कबीर पन्थ की बुनियाद पड़ चुकी है। बहुत से हिन्दू भी उसमें सम्मिलित हो चुके हैं। हिन्दुओं के लिए यह बात शोभा नहीं देती कि वे एक मुसलमान के शिष्य बनें।

गिरिजाप्रसाद—कबीर मुसलमान नहीं, वे तो मुसलमानों के कट्टर विरोधी हैं। बस, उनका जन्म ही मुसलमान घराने में हुआ है।

गंगादत्त—यह तो मैंने भी सुना है कि मुसलमान उनसे सख्त नाराज हैं। यह भी सुनने में आया है कि कुछ लोगों ने बादशाह के काज़ी तक भी कबीर की शिकायत पहुँचाई है। शायद बादशाह के कानों तक भी यह बात पहुँच गई हो।

गिरिजाप्रसाद—तब तो बहुत बुरा होगा। शायद बादशाह इन्हें प्राणदंड ही दे दें, क्योंकि बादशाह यह सहन नहीं कर सकता कि एक मुसलमान अपने दीन को छोड़े। कबीर ने तो स्वयं भी इस्लाम को छोड़ दिया है और दूसरों से भी छुड़वाया है।

दुर्गादत्त—यह बात बादशाह तक पहुँचे बिना नहीं रह सकती।

गिरिजाप्रसाद—कितने दुःख की बात है कि मनुष्य के

दिमाग को बिलकुल स्वतन्त्रता नहीं रही। धर्म तो मनुष्य के मस्तिष्क को विकसित करने के लिए होता है, किन्तु आजकल धर्म ने हमें संकीर्ण और अनुदार बना दिया है।

[ चारों मित्र बातें करते हुए बगें की ओर चल पड़ते हैं। ]

पर्दा गिरता है।

× ——— × ——— × ——— ×

## दूसरा दृश्य

[ स्थान काशीधाम। समय मध्याह्नान्तर। रामानन्दजी अपने आश्रम में हैं और सामने रविदास, सेन और धीरा आदि शिष्य बैठे हुए हैं। ]

रविदास—महाराज, आपके शिष्य कबीर ने तो चारों ओर धूम मचा दी है। सुना है कि शेख तक़ी के भी खूब दाँत खट्टे किये।

रामानन्द—पुत्र, कबीर के अन्दर सच्ची लगन है। यदि वह ऐसी ही लगन से काम करता रहा तो संसार का बहुत उपकार होगा।

रविदास—गुरुदेव, मानिकपुर में तो शेख तक़ी ने खूब जाल बिछाया था। अब तो कबीर ने उसकी सारी पोल खोल दी।

रामानन्द—शेख तक़ी को हम खूब जानते हैं! न तो उसकी उच्च शिक्षा ही हुई है और न विस्तृत अध्ययन ही है। धर्म-कर्म में कोई निष्ठा भी नहीं, किन्तु आडम्बर का जाल इतना फैला रक्खा है कि बड़े-बड़े विद्वान् और क्रिया-शील मुसलमान भी उसमें फँस गए हैं।

रविदास—महाराज, सूफियों में दिखावा ही दिखावा है। हिन्दू

धर्म के नाथों की तरह ये लोग भी विषय की गहराई में जाने का प्रयत्न नहीं करते।

रामानन्द—वत्स, अर्द्ध-शिक्षित फक़ीर प्रायः आडम्बर-प्रिय हो ही जाते हैं। विद्वान् लोग तो अपनी विद्वत्ता का सिक्का बिठाकर लोगों के दिलों को वशीभूत कर लेते हैं। किन्तु अशिक्षित या अर्द्ध-शिक्षित लोग तरह-तरह के आडम्बरों ही लोगों को मुग्ध करने का प्रयत्न करते हैं ?

सेन—महाराज, कबीर ने एक साधारण मुसलमान घर में उत्पन्न होकर इतनी उन्नति किस प्रकार करली ?

रामानन्द—यह सब पूर्व जन्म के संस्कारों का प्रभाव है। कबीर अवश्य ही पहले जन्म में तपस्वी और गुणी रहा होगा। कबीर को ही क्यों कहते हो, यह तुम्हारा भाई रविदास भी तो चमारों के घर उत्पन्न हुआ है। आज बड़े-बड़े साधु और महात्मा भी इसकी गर्द तक को नहीं पा सकते। तुम खुद नाई घर में उत्पन्न हुये हो, किन्तु बड़े-बड़े योग्य भक्त तुम्हारी स्पर्द्धा कर सकते हैं।

सेन—क्या पूर्व जन्म के संस्कारों का मनुष्य पर प्रभाव पड़ता है ?

रामानन्द—अवश्य। भगवान कृष्ण ने गीता में कहा तो है कि शुद्ध आत्माओं में पूर्व जन्म के संस्कार अत्यन्त प्रबल और स्पष्ट होते हैं, किन्तु साधारण जीवों में यह संस्कार अस्पष्ट और निर्बल हो जाते हैं। भगवान् कृष्ण को अपने पूर्व जन्मों की बातें याद थीं, क्योंकि उनकी आत्मा अत्यन्त निर्मल हो चुकी थी।

सेन—यदि कबीर पूर्व जन्म में एक अच्छे महापुरुष थे तो फिर उनका जन्म किसी उच्च कुल में क्यों नहीं हुआ ?

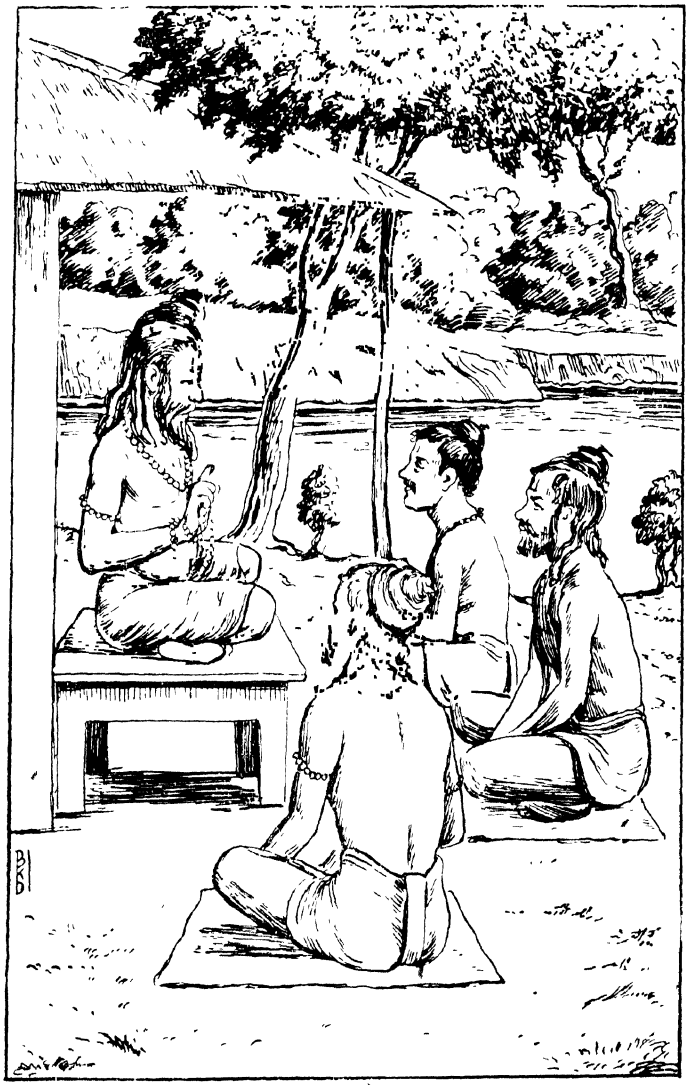

रामानन्द जी उपदेश दे रहे हैं

रामानन्द—जन्म भी कर्मों के अनुसार होता है। कोई धनिक के घर उत्पन्न होता है कोई निर्धन के, कोई विद्वान् के घर उत्पन्न होता है और कोई मूर्ख के। यह सब कर्मों की ही लीला है। दयालु और न्यायकारी भगवान् सबको कर्मों का यथावत् फल देनेवाले हैं। बड़े से बड़े पुण्यशाली महात्मा में भी पाप की कुछ न कुछ मात्रा अवश्य होती है जिसका फल उसे भोगना ही पड़ता है। और भगवान् की लीला ही बड़ी विचित्र है। कई बार भक्तों को नीच और हीन कुल में ही जन्म लेना पड़ता है ताकि विपत्तियों की भट्टी में पड़कर भक्ति का कुन्दन और भी चमक उठे। भक्त प्रह्लाद का जन्म यदि एक राक्षस कुल में न होता, तो उनकी भक्ति का रंग इतना न चमकता। वाल्मीकि यदि डाकुओं के हीन कुल में उत्पन्न न होते, तो त्याग और वैराग्य की भावना इतनी समादरणीय न होती। भगवान् यह भी तो दर्शाना चाहते हैं कि जन्म से कोई छोटा या बड़ा नहीं। नीच कुल में जन्म लेकर भी पुरुष अपने शुभकर्मों द्वारा उच्च हो सकता है, इसीलिए बहुत से भक्त और महापुरुष नीच कुल में जन्म पाकर अपनी महत्ता का परिचय देते हैं। यदि सुन्दर टहनी पर सुन्दर फूल लगे तो कोई आश्चर्य की बात नहीं, किन्तु भगवान् की आश्चर्यमय लीला तो तब प्रकट होती है जब कि नितान्त कँटीली झाड़ियों में भी सुन्दर फूल प्रफुल्लित हों।

पीपा—महाराज, कुछ लोग तो यह आक्षेप कर रहे हैं कि गुरुजी ने एक जन्म के मुसलमान को दीक्षा देकर अच्छा काम नहीं किया।

रामानन्द—लोगों के अन्दर संकीर्णता का भाव घर कर चुका है।

हम तो प्राणि मात्र को भगवद्-भक्ति का अधिकारी समझते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को राम नाम का जप करने की खुली आज्ञा होनी चाहिए। मन्दिर में जाकर देव दर्शन का प्रतिबन्ध किसी के लिए नहीं होना चाहिए। जब भगवान् की दी हुई प्रत्येक वस्तु प्राणि मात्र के लिए है तो भगवद्-भक्ति में भी सबका समान अधिकार है।

पीपा—महाराज, दीक्षा देने से पहले वंश और गोत्र का प्रश्न तो पुराने ऋषि-मुनि भी किया करते थे। इससे यह स्पष्ट है कि दीक्षा में गोत्र और वंश की भारी प्रधानता है।

रामानन्द—तुम्हारी बात सत्य है। गुरु के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने शिष्य के वंश से परिचित हो। किन्तु प्राचीन समय में भी किसी गुरु ने किसी भी शिष्य को हीन कुल में जन्म लेने के कारण दीक्षा से वंचित नहीं रक्खा। दीक्षा के लिए शिष्य की योग्यता प्रधान है और उसका वंश गौण। वंश पूछने का मुख्य तात्पर्य यह है कि बालक के ऊपर वंश के संस्कारों की प्रबलता अवश्य होती है। अच्छे वंश में उत्पन्न होकर अच्छे संस्कारों में पले हुए बालकों के बिगड़ने की सम्भावना बहुत ही कम होती है। इसी प्रकार कुसंस्कारों में पले हुए बालकों के बनने की भी सम्भावना बहुत कम होती है। किन्तु कभी-कभी इसके विपरीत भी देखा गया है। उत्तम वृक्षों पर और कँटीले वृक्षों पर सुन्दर पुष्प खिल जाते हैं। इसीलिए दीक्षा में शिष्य की अपनी योग्यता को प्रमुख और वंश को गौण माना गया है। शास्त्रों में कहा भी है कि जन्म से सब शूद्र होते हैं, द्विज शिक्षा और दीक्षा से बन जाते हैं।

पीपा—महाराज, फिर तो वर्णसंकर हो जायगा।

रामानन्द—वत्स, वर्णसंकर इस प्रकार नहीं होता; अपितु जब कोई व्यक्ति अपने वर्ण और आश्रम के धर्म को छोड़ कर दूसरे वर्णाश्रम के धर्म को ग्रहण करने की अनधिकार चेष्टा करता है तो वर्णसंकर हो जाता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि वर्णों को अपने-अपने वर्ण के कृत्यों का पालन करना चाहिए। इसी प्रकार ब्रह्मचारी और गृहस्थी आदि आश्रमियों को अपने-अपने आश्रमों के अनुकूल आचरण करना चाहिए अन्यथा वर्णसंकर हो जायगा। इसी वर्णसंकर को रोकने के लिए भगवान् कृष्ण ने कहा है कि अपने धर्म का पालन करते हुए मर मिटना भी अच्छा है। याद रहे कि वर्ण की आधार-शिला जन्म नहीं, अपितु गुण, कर्म और स्वभाव हैं।

पीपा—महाराज, आज आपकी कृपा से मेरे संशय की निवृत्ति हो गई।

रामानन्द—भगवान् ही सबका भ्रम और संशय मिटानेवाला है। सच्चे हृदय से उसी की आराधना करनी चाहिए। अब विश्राम करो।

[ शिष्यों का प्रस्थान ]

पर्दा गिरता है।

× ——— × ——— × ——— ×

## तीसरा दृश्य

[ स्थान काशीधाम। समय प्रातःकाल। रामानन्दजी का आश्रम। सत्संग हो रहा है और भक्तों का जमघटा लगा हुआ है। ]

रामानन्द—( गाते हैं )

कहाँ जाइए हो घरि लागो रंग ।
मेरो चित चंचल मन भयो अपंग ॥
जहाँ जाइए तहँ जल पषान ।
पूरि रहे हरि सब समान ॥
वेद स्मृति सब मेल्हे जोइ ।
उहाँ जाइए हरि इहाँ न होई ॥
एक बार मन भयो उमंग ।
घसि चोवा चंदन चारि अंग ॥
पूजन चाली ठाइँ ठाइँ !
सो ब्रह्म बतायो गुरु आप माइँ ॥
सतगुर में बलिहार तोर ।
सकल विकल भ्रम जोर मोर ॥
रामानन्द रमै एक ब्रह्म ।
गुरु कै एक सबद काटै कोटिक्रम्म ॥

( भक्तों की मण्डली में जयजयकार )

रामानन्द—प्यारे भक्तो ! प्रभु से सच्चा प्रेम करो। भगवान् सच्चे प्रेम के भूखे हैं और सच्चे भक्तों के वश में रहते हैं। वे अपने भक्तों पर कभी कोई संकट नहीं आने देते। यदि भगवान के भक्त पर कभी कोई संकट आपड़े तो समझना चाहिए कि भक्त की परीक्षा हो रही है। संकट में पड़ कर आत्मा उन्नत हो जाती है। संकट हमारे लिए एक महौषध का काम देते हैं। मनुष्य के मन में मद, मोह, अहंकार आदि नाना रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इन रोगों का इलाज केवल

संकट रूपी औषध से ही होता है। [ सहसा कबीर का प्रवेश। गुरु के चरणों में दण्डवत्-प्रणाम ]

रामानन्द—वत्स, अच्छा हुआ कि तुम आगये। तुमसे मिलने को बहुत जी चाहता था।

कबीर—महाराज, यह आपका मेरे ऊपर भारी अनुग्रह है। जिस मनुष्य के ऊपर गुरु की इतनी कृपा हो, निःसन्देह वह धन्य है।

रामानन्द—बेटा, अब मैं बूढ़ा हो गया हूँ। इस नश्वर शरीर का कुछ भी पता नहीं। ठीक ऐसे ही बुढ़ापे में मेरे परम पूज्य गुरु श्री राघवानन्दजी महाराज ने उत्तरदायित्व का कार्य मुझे सौंपा था। अब मैं यही भार तुम्हारे कन्धों पर डाल रहा हूँ। देखना, सत्य का प्रचार रुकने न पावे।

कबीर—( आँखों में आँसू भरकर ) मेरे इष्टदेव, यह आप क्या कह रहे हैं। हमारी तो हार्दिक इच्छा यही है कि आप इस संसार में अमर होकर सदा जिज्ञासु भक्तों की प्यास बुझाते रहें।

रामानन्द—बेटा, नश्वर शरीर से यह असम्भव कामना नहीं करनी चाहिए। अब तो उस काम को करने का बीड़ा उठाओ जिसके लिए भगवान् ने तुम्हें भेजा है।

कबीर—महाराज, मैं तो आपका एक तुच्छ सेवक हूँ। सर्व-साधारण का दास हूँ। मैं करना बहुत कुछ चाहता हूँ, किन्तु कर कुछ भी नहीं पाता। यदि आपका आशीर्वाद हुआ तो शायद कुछ करने में सफल हो जाऊँ।

रामानन्द—वत्स, भगवान् तुम्हारे साथ है। अपने सारे कार्य उसको समर्पित कर दो, बस यही सफलता का गुर है। भगवान् ठीक समय पर अपने भक्तों की सहायता करता है।

प्रह्लाद के भारी कष्ट को भगवान् ने हरा। द्रौपदी के चीर को बढ़ाया। गज, गणिका, व्याध और गिद्ध का बेड़ा पार किया। उस भगवान् के आश्रय में रहो, वह सब कुछ कर सकता है।

कबीर—महाराज, आपके इन वचनों से मेरे हृदय में एक पुरानी शंका जाग उठी है।

रामानन्द—वत्स, वह तुम्हारी शंका क्या है ?

कबीर—महाराज, मैंने रह-रहकर सोचा किन्तु अवतारवाद का सिद्धान्त मेरी समझ में नहीं आया। मैं यह न समझ सका कि भगवान् कौशल्या के गर्भ में क्यों आया, देवकी का सुत क्यों बना ? यदि दुष्टों को दंड देना अभीष्ट था तो यह कार्य अवतार धारण किए बिना भी हो सकता था।

रामानन्द—पुत्र, यह ठीक है कि भगवान् अवतार धारण किए बिना भी सज्जनों की रक्षा और दुष्टों का दलन कर सकते हैं, पर अवतार धारण करने से लोगों की आँखें खुल जाती हैं। यदि भगवान् अपने निराकार रूप में रहकर दुष्टों को दंड दें तो उनकी प्रभुता का सिक्का नहीं बैठता। किन्तु जब भगवान् सर्वसाधारण के बीच आकर दुष्ट-दलन और सज्जन-पालन का कार्य करते हैं तो लोग अपनी आँखों के सामने हर एक बात को देख लेते हैं और उन्हें प्रभु की शक्ति में पूरा विश्वास हो जाता है, क्योंकि साधारण लोगों की प्रत्यक्ष बात में ही अधिक श्रद्धा होती है। इससे सज्जनों का उत्साह बढ़ जाता है और दुष्टों का उत्साह सदा के लिए भंग हो जाता है।

कबीर—महाराज, यह बात तो आप की सत्य है, किन्तु निराकार भगवान् का जन्म धारण करना संभव प्रतीत नहीं होता।

रामानन्द—वत्स, भगवान् निराकार भी है और साकार भी। भगवान् का निराकार स्वरूप तो सदा विद्यमान रहता है; किन्तु कभी-कभी साकर रूप भी प्रकट हो जाता है। इसी-लिए भगवान् निर्गुण और सगुण दोनों प्रकार का माना गया है। जब भगवान अपने निराकार स्वरूप में होता है तो निर्गुण कहलाता है। जब साकार रूप में होता है तो सगुण कहलाता है। भगवान् के निर्गुण रूप की उपासना केवल योगी लोग ही कर सकते हैं। सर्वसाधारण के लिए तो सगुण भगवान् ही आराध्य है।

कबीर—महाराज, शरीर का धारण करना बिना कर्मों के नहीं हो सकता। पाप-पुण्य कर्मों का फल ही यह शरीर है। भगवान् ने तो पाप-पुण्य कुछ भी नहीं किया, जिसके भोग के लिए उसे शरीर धारण करना पड़े।

रामानन्द—पुत्र, यह व्यवस्था साधारण जीवों के लिए है। साधारण जीव अपने कर्मों का फल भोगने के लिए ही नाना योनियों में जाते हैं। भगवान् अपनी इच्छा से शरीर धारण करते हैं। वे कर्मों का फल भोगने के लिए इस संसार में नहीं आते। शरीर धारण करके भगवान् साधारण मनुष्यों की भाँति कर्म करते हैं, किन्तु उन्हें उन कर्मों का फल नहीं भोगना पड़ता जो कि अवतार धारण करने की अवस्था में किये गये हों।

कबीर—महाराज, कृपा करके यह भी बताइये कि एक ही समय में भगवान् के साकार और निराकार दोनों रूप किस प्रकार स्थिर रह सकते हैं।

रामानन्द—वत्स, अवतार सम्पूर्ण भगवान् का नहीं होता, अपितु उसके एक अंश का होता है। जब एक अंश अवतार

लेकर साकार होता है तो शेष ब्रह्म अपने शुद्ध रूप में निर्गुण और निराकार रहता है। यह सारा संसार चिद्-चिद्विशिष्ट ब्रह्म का ही प्रसार है, फिर अवतार लेने की बात असंभव क्योंकर हो सकती है।

कबीर—महाराज, यह बात जरा और स्पष्ट कीजिए।

रामानन्द—बहुत अच्छा। देखो, संसार में ब्रह्म के अतिरिक्त और कोई पदार्थ नहीं। ब्रह्म के दो रूप हैं चित् और अचित्। चित् ब्रह्म का अंश और जीव है और अचित् ब्रह्म का अंश प्रकृति का सारा वैभव है। इस प्रकार ये सब जीव ब्रह्म का अंश मात्र हैं। उसी से निकले हैं और एक दिन उसी में मिल जायँगे। जीव और ब्रह्म में इतना ही भेद है जितना कि बिन्दु और सिन्धु में होता है। बूँद समुद्र के विशद जल का ही अंश है। समुद्र के जल में से उछली हुई एक बूँद अलग प्रतीत होती है; किन्तु वास्तव में वह जल का ही अंश है। समुद्र और बूँद में केवल छोटे और बड़े का भेद है। बूँद छोटी है और समुद्र बड़ा। बस यही व्यवस्था जीव और ब्रह्म की है। सारे जीव ब्रह्म का अंश मात्र हैं। अंश और अंशी भेद से जीव और ब्रह्म व्यवहार दशा में नितान्त भिन्न हैं, किन्तु परमार्थ दशा में बिलकुल एक।

अवतार और साधारण जीव दोनों ही ब्रह्म का अंश हैं। भेद केवल इतना ही है कि साधारण जीव अपने कर्मों का फल भोगने के लिए संसार में आते हैं और कर्मों का क्षय होने पर मुक्त होकर ब्रह्म में लीन हो जाते हैं। इसके विपरीत अवतार कर्मों का फल भोगने के लिए नहीं होता। उसे ब्रह्म में लीन होने के लिए कर्मों का क्षय करने की भी आवश्यकता नहीं। उसका बन्धन कृत्रिम होता है, वास्तविक नहीं। अवतार कालीन जीवन की अवधि को समाप्त करने

के पश्चात् ब्रह्म का अंश फिर ब्रह्म में ही मिल जता है।

और भी स्पष्ट शब्दों में सुनिए। अवतारवाले अंश के पिछले जन्मों के संस्कार आदि कुछ भी नहीं होते। राम ने दशरथ के घर जन्म लिया। यह जन्म पिछले कर्मों से कोई सम्बन्ध नहीं रखता। राम की जाति, आयु, भोग आदि सब चीजें कर्मों की अपेक्षा से रहित हैं। इसके विपरीत कबीर ने नीरू के घर जन्म लिया; कबीर को जाति, आयु नाम आदि सब बातें कबीर के पिछले कर्मों का परिणाम हैं।

कबीर—महाराज, ज़रा जीव और ब्रह्म के भेद को और भी स्पष्ट कीजिए।

रामानन्द—यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि जीव और ब्रह्म में पारमार्थिक कोई भेद नहीं। बस इतना ही भेद है जितना कि बिन्दु और सिन्धु में है। अन्य दृष्टान्त सुनिए। कुएँ में घड़े को डुबोते हैं। कुएँ का कुछ पानी घड़े में भर जाता है और वह कुएँ के जल से पृथक् हो जाता है। घड़े ने कुएँ के भारी जल में से थोड़ा सा अंश ले लिया और घड़े के कपालों ने उस जल को कुएँ के शेष जल से पृथक् कर दिया। बस यही दशा जीव की है। यह भौतिक शरीर-महान ब्रह्म में से जिस थोड़े से अंश को अपने अन्दर ले लेता है, वही जीव कहलाता है। अर्थात् शरीर के अन्दर आनेवाला ब्रह्म जीव हो जाता है। यदि घड़ा फूट जाए तो उसका जल कुएँ के जल में ही मिल जाता है। इसी प्रकार जब यह शरीर नष्ट हो जाता है, और कर्मों के क्षय होने पर अगला शरीर भी नहीं मिलता तो शरीर में होनेवाला जीव ब्रह्म में मिल जाता है। कहने का भाव यह है कि शरीर की उपाधि से युक्त ब्रह्म जीव कहलाता है; कर्मों के परिणाम के बिना शरीर की उपाधि से युक्त ब्रह्म

लेकर साकार होता है तो शेष ब्रह्म अपने शुद्ध रूप में निर्गुण और निराकार रहता है। यह सारा संसार चिद-चिद्विशिष्ट ब्रह्म का ही प्रसार है, फिर अवतार लेने की बात असंभव क्योंकर हो सकती है।

कबीर—महाराज, यह बात जरा और स्पष्ट कीजिए।

रामानन्द—बहुत अच्छा। देखो, संसार में ब्रह्म के अतिरिक्त और कोई पदार्थ नहीं। ब्रह्म के दो रूप हैं चित् और अचित्। चित् ब्रह्म का अंश और जीव है और अचित् ब्रह्म का अंश प्रकृति का सारा वैभव है। इस प्रकार ये सब जीव ब्रह्म का अंश मात्र हैं। उसी से निकले हैं और एक दिन उसी में मिल जायँगे। जीव और ब्रह्म में इतना ही भेद है जितना कि बिन्दु और सिन्धु में होता है। बूँद समुद्र के विशद जल का ही अंश है। समुद्र के जल में से उछली हुई एक बूँद अलग प्रतीत होती है; किन्तु वास्तव में वह जल का ही अंश है। समुद्र और बूँद में केवल छोटे और बड़े का भेद है। बूँद छोटी है और समुद्र बड़ा। बस यही व्यवस्था जीव और ब्रह्म की है। सारे जीव ब्रह्म का अंश मात्र हैं। अंश और अंशी भेद से जीव और ब्रह्म व्यवहार दशा में नितान्त भिन्न हैं, किन्तु परमार्थ दशा में बिलकुल एक।

अवतार और साधारण जीव दोनों ही ब्रह्म का अंश हैं। भेद केवल इतना ही है कि साधारण जीव अपने कर्मों का फल भोगने के लिए संसार में आते हैं और कर्मों का क्षय होने पर मुक्त होकर ब्रह्म में लीन हो जाते हैं। इसके विपरीत अवतार कर्मों का फल भोगने के लिए नहीं होता। उसे ब्रह्म में लीन होने के लिए कर्मों का क्षय करने की भी आवश्यकता नहीं। उसका बन्धन कृत्रिम होता है, वास्तविक नहीं। अवतार कालीन जीवन की अवधि को समाप्त करने

के पश्चात् ब्रह्म का अंश फिर ब्रह्म में ही मिल जता है।

और भी स्पष्ट शब्दों में सुनिए। अवतारवाले अंश के पिछले जन्मों के संस्कार आदि कुछ भी नहीं होते। राम ने दशरथ के घर जन्म लिया। यह जन्म पिछले कर्मों से कोई सम्बन्ध नहीं रखता। राम की जाति, आयु, भोग आदि सब चीजें कर्मों की अपेक्षा से रहित हैं। इसके विपरीत कबीर ने नीरू के घर जन्म लिया; कबीर को जाति, आयु नाम आदि सब बातें कबीर के पिछले कर्मों का परिणाम हैं।

कबीर—महाराज, ज़रा जीव और ब्रह्म के भेद को और भी स्पष्ट कीजिए।

रामानन्द—यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि जीव और ब्रह्म में पारमार्थिक कोई भेद नहीं। बस इतना ही भेद है जितना कि बिन्दु और सिन्धु में है। अन्य दृष्टान्त सुनिए। कुएँ में घड़े को डुबोते हैं। कुएँ का कुछ पानी घड़े में भर जाता है और वह कुएँ के जल से पृथक् हो जाता है। घड़े ने कुएँ के भारी जल में से थोड़ा सा अंश ले लिया और घड़े के कपालों ने उस जल को कुएँ के शेष जल से पृथक् कर दिया। बस यही दशा जीव की है। यह भौतिक शरीर-महान ब्रह्म में से जिस थोड़े से अंश को अपने अन्दर ले लेता है, वही जीव कहलाता है। अर्थात् शरीर के अन्दर आनेवाला ब्रह्म जीव हो जाता है। यदि घड़ा फूट जाए तो उसका जल कुएँ के जल में ही मिल जाता है। इसी प्रकार जब यह शरीर नष्ट हो जाता है, और कर्मों के क्षय होने पर अगला शरीर भी नहीं मिलता तो शरीर में होनेवाला जीव ब्रह्म में मिल जाता है। कहने का भाव यह है कि शरीर की उपाधि से युक्त ब्रह्म जीव कहलाता है; कर्मों के परिणाम के बिना शरीर की उपाधि से युक्त ब्रह्म

जीव कहलाता है। मायाविशिष्ट ब्रह्म ईश्वर कहलाता है और मायारहित ब्रह्म शुद्ध ब्रह्म कहलाता है।

कबीर—महाराज, आपकी कृपा से मेरी जटिल शंकाओं की निवृत्ति होगई। सच है, संसार में गुरु के बिना भ्रम और संशय का नाश करनेवाला और कोई भी नहीं।

रामानन्द—बेटा, संसार में बहुत से लोग जीव को ब्रह्म का अंश तो आसानी से मान लेते हैं; किन्तु अवतार को भगवान् का अंश मानने के लिए तय्यार नहीं होते। वे यही हठ करते रहते हैं कि ईश्वर का अवतार नहीं हो सकता। जब जीव को ब्रह्म का अंश मान लिया तो अवतारवाद का सिद्धान्त स्वयं ही स्पष्ट हो गया। हिन्दू धर्म के अतिरिक्त मुसलमान भी जीव को ब्रह्म का अंश मानते हैं। किन्तु साथ ही अवतारवाद को मिथ्या कह देते हैं। यह बड़े आश्चर्य की बात है। हाँ, जो लोग ईश्वर, जीव और प्रकृति तीनों को अनादि मानते हैं और तीनों की पृथक् सत्ता को स्वीकार करते हैं, उनको पहले यह समझाना होगा कि संसार में ब्रह्म के अतिरिक्त और कोई सत्ता ही नहीं हो सकती। जब वे इस सिद्धान्त को मान लेंगे तो अवतार का सिद्धान्त अनायास ही उनकी समझ में आ जायगा।

कबीर—धन्य हैं महाराज, आप। आपका ज्ञान अगम और अगोचर है। जो लोग आपकी शरण में आगये हैं उनका अवश्य ही निस्तार होगा।

[ संगत विसर्जित ]

पर्दा गिरता है।

× ——— × ——— × ——— ×

## चौथा दृश्य

[ स्थान काशीधाम । समय प्रातःकाल । कबीर आसन जमाकर बैठे हुए हैं ]

कबीर—( गाते हैं )

मन रे राम सुमिरि, राम सुमिरि, राम सुमिरि भाई।
राम नाम सुमिरन बिना, बूड़त है अधिकाई ॥
दारा सुत गेह नेह संपति अधिकाई ।
यामें कछु नाहिं तेरौ काल अवधि आई ॥
अजामल गज गनिका पतित करम कीन्हाँ ।
तेऊ उतरि पारि गये राम नाम लीन्हाँ ॥
स्वान सूकर काग कीन्हों, तऊ लाज न आई।
राम नाम अमृत छाँड़ि, काहे विष खाई ॥
तजि भरम करम विधि निषेद राम नाम लेही।
जन कबीर गुर प्रसादि राम करि सनेही ॥

संसार नश्वर है। इस असार संसार में केवल राम नाम ही सारयुक्त है । जो लोग मानुष जन्म को प्राप्त करके राम नाम के जप से अपनी रसना को पवित्र नहीं करते उनका जीवन व्यर्थ है। मनुष्य और पशु में यही तो भेद है कि मनुष्य के अन्दर धर्म और अधर्म का विवेक है और पशु इस विवेक से शून्य हैं। यदि मनुष्य भी अपने धर्म का पालन न करे तो फिर मनुष्य और पशु में कोई भेद नहीं।

[ धर्मदास का प्रवेश ]

कबीर—आओ मेरी अशाओं के निकेतन धर्मदास, आओ

बैठ जाओ। मुझे तुमसे बड़ी आशा है और पूर्ण विश्वास है कि तुम सत्य के प्रचार से विमुख न होगे।

धर्मदास—गुरुदेव, संसार बड़ा स्वार्थी है। यहाँ सत्य का कोई आदर नहीं।

कबीर—वत्स, संसार की कोई परवाह नहीं करनी चाहिए। जो लोग संसार के भय से या किसी विशेष प्रलोभन से सत्य को छोड़ देते हैं, वे महान अनर्थ करते हैं।

धर्मदास—महाराज, आपकी बात सत्य है। परन्तु मनुष्य आखिर मनुष्य है। असत्य की विजय को देखते हुए बड़े-बड़े सत्य-शील मनुष्यों का साहस भंग हो जाता है। मुझे तो आपके साहस को देखकर आश्चर्य हो रहा है।

[ सहसा भागू दास का प्रवेश ]

कबीर—कहो भागूदास, कैसे आना हुआ ?

भागूदास—महाराज, बाहर एक महात्मा खड़े हैं। कोई ३० वर्ष की आयु होगी। सिर पर सफेद पगड़ी, हाथ में माला, लम्बी दाढ़ी और तन पर सफेद कुर्ता पहने हुए हैं। आपसे मिलना चाहते हैं और अपना नाम दास नानक बताते हैं।

[ नानक का नाम सुनते ही कबीर चौंककर खड़े हो गये तथा नंगे पैर और नंग सिर द्वार की ओर दौड़े। दोनों सन्त बड़े प्रेम से गले लगकर मिले तथा दोनों एक दूसरे का हाथ पकड़े हुए अन्दर आ गये ]

कबीर—(नम्रता से) महात्माजी, आपने बड़ी कृपा की जो इस दास की कुटिया को पवित्र किया। मेरे कहाँ भाग्य, जो इतने बड़े सन्त स्वयं आकर मुझे दर्शन दें।

नानक—मैं सत्संग का भूखा हूँ। बहुत दिनों से आपके दर्शनों की अभिलाषा थी किन्तु आज पूरी हुई।

कबीर—धन्य हैं वे भक्त जिनके हृदय में इतना प्रेम हो। अच्छा, कोई भजन तो सुनाइए, क्योंकि आपका भजन आपके मुख से सुनने की बड़ी उत्कंठा है।

नानक—जो आज्ञा ( गाते हैं )

जो नर दुख में दुख नहिं माने।
सुख सनेह अरु भय नहिं जाके, कंचन माटी जाने॥
नहिं निन्दा नहिं अस्तुति जाके, लोभ मोह अभिमाना।
हरष सोक तें रहै नियारो, नाहिं मान अपमाना॥
आसा मनसा सकल त्यागि कै जग तें रहै निरासा।
काम क्रोध जेहि परसै नाहिन, तेहि घट ब्रह्म निवासा।
गुरु किरपा जेहि नर पै कीन्हीं तिन्ह यह जुगुति बिछानी।
नानक लीन भयो गोबिंद सों ज्यों पानी संग पानी॥

[ कबीर मस्त होकर झूमते हैं ]

नानक—अब आप भी कुछ सुनाइए।

कबीर—बहुत अच्छा। ( गाते हैं )

तेरा जन एक आध है कोई।
काम क्रोध अरु लोभ विवर्जित, हरिपद चीन्है सोई॥
राजस, तामस, सातिं गतीन्यूं, ये सब तेरी माया।
चौथे पद कौ जे जन चीन्हैं, तिनहिं परम पद पाया॥
असतुति निंद्या आसा छाँड़ै, तजै मान अभिमाना।
लोहा कंचन समि करि देखै, ते मूरति भगवाना॥

धर्मदास—महाराज, कितना आश्चर्य है कि आप दोनों सन्तों के वचन एक जैसे ही निकले। ये दोनों पद ऐसे मालूम होते हैं कि दो व्यक्ति यों ने सलाह करके बनाये हैं।

कबीर—पुत्र, क्या तुम्हें पता नहीं कि सौ मूर्ख सौ राह और सौ ज्ञानी एक राह। विद्वानों का मार्ग एक हुआ करता है।

नानक—सुना है कि आपके प्रचार कार्य तो में बहुत कठिनाइयां आ रही हैं।

कबीर—सत्य के प्रचार में कठिनाइयाँ आया ही करती हैं।

नानक—हमारे यहाँ पंजाब की जनता में यद्यपि विद्या का प्रचार बहुत कम है किन्तु लोगों में श्रद्धा बहुत है। वे प्रत्येक नई शिक्षा को बड़ी श्रद्धा और भक्ति के साथ सुनते हैं।

कबीर—इसमें क्या सन्देह। पजाब में आक्रमणकारियों का अधिक ज़ोर रहा है। तरह-तरह के कष्टों ने उनकी आँखें खोल दी हैं। साथ ही बाहर की जातियों के साथ संसर्ग होने से पंजाबियों की संकीर्णता बहुत हद तक दूर हो गई है।

नानक—काशी तो विद्या का केन्द्र है, फिर यहाँ प्रचार के मार्ग में रुकावटें कैसी ?

कबीर—बस यही सबसे बड़ी रुकावट है। शताब्दियों से विद्या संकीर्ण और स्वार्थी लोगों के हाथों में आगई है। उन्होंने सर्वसाधारण के मस्तिष्क को इतना दूषित कर दिया है कि कोई सुधार की बात ग्रहण ही नहीं करते। इन विद्वानों ने तरह-तरह की व्यवस्थायें बना रक्खी हैं। शूद्रों को विद्या नहीं पढ़ाते। उनके हाथ का बना हुआ भोजन भी नहीं करते। भगवान् की भक्ति में केवल अपना ही अधिकार समझते हैं। भला हो गुरु रामानन्दजी महाराज का। उन्होंने इस संकीर्णता को मिटाने का भरसक प्रयत्न किया है। यदि गुरुदेव यह मार्ग न बनाते तो सुधार का काम कठिन ही नहीं, अपितु असम्भव हो जाता।

नानक—महात्माजी, आपने तो लोगों की मनोवृत्तियों और परिस्थितियों का खूब अध्ययन किया हुआ है। आपके दर्शन करके बहुत लाभ हुआ। अब मुझे जाने की आज्ञा दीजिए। डेरे पर और भी बहुत से महात्मा ठहरे हुए हैं, वे मेरी प्रतीक्षा कर रहे होंगे।

कबीर—( धर्मदास से ) बेटा, इन महात्माजी को इनके डेरे तक आदरपूर्वक पहुँचा आओ। ऐसे महात्माओं के दर्शन संसार में दुर्लभ हैं।

धर्मदास—जो आज्ञा गुरुजी की।

( दोनों का प्रस्थान )

पर्दा गिरता है

× ——— × ——— × ——— ×

# चौथा अङ्क

## पहला दृश्य

[ स्थान दिल्ली नगर। सिकन्दर लोदी का दरबार। समय प्रातःकाल। सिंहासन पर बादशाह बैठा हुआ है तथा सब अमीर वज़ीर यथास्थान बैठे हुए हैं ]

बादशाह—( काज़ी से ) क्यों क़ाज़ी साहब, कबीर के बारे में और तो कोई शिकायत सुनने में नहीं आई ?

क़ाज़ी—( आदाब बजाकर ) जहाँपनाह, बहुत ज़्यादा। उस काफ़िर ने तो गज़ब कर दिया। मानिकपुर में तो पीर व मुर्शिद शेख तक़ी की तौहीन की थी। यही हाल जौनपुर और फैज़ाबाद के डेरों में जाकर किया। अब सुना है कि दिल्ली में आकर गड़बड़ मचाने की तय्यारियाँ कर रहा है। उसका मतलब ही यह है कि इस्लाम के केन्द्र स्थानों की बुनियादों को हिला दिया जाए। हज़ारों भोले-भाले मुसलमान उसके जाल में फँसकर बेदीन हो चुके हैं। उस कमबख्त काफ़िर ने तो खुदा और रसूल की भी वह तौहीन की है कि सुन कर कानों पर हाथ धरना पड़ता है। खुदा को बहरा कहा है। औलिया लोगों को हिंसक और क्रूर कहकर पुकारा है। क़ुरानशरीफ को झूठी किताब कहता है। हुज़ूर वह आपकी नर्मी का नाजायज़ फायदा उठा रहा है। यदि किसी और बादशाह का ज़माना होता तो ऐसे बदज़बान की ज़बान निकलवा ली जाती और कभी का मौत के घाट उतार दिया जाता।

बादशाह—हम बहुत दिनों से इसी बात को सोच रहे हैं कि ऐसे व्यक्ति के साथ क्या सलूक किया जाए। उसने अपनी भक्ति के जाल में बहुत से लोगों को फँसा रक्खा है। ऐसा न हो कि उसको दंड देने से लोगों में बेचैनी फैल जाय। विदेशी लोग तो इसी इन्तज़ार में हैं कि कब हिन्दुस्तान में गड़-बड़ हो और हम हमला करें। तैमूर के हमले से तुर्कों को चाट लग गई है। इस मुल्क को देखकर उनके मुँह में पानी भरा हुआ है।

क़ाज़ी—जहाँपनाह ! इसीलिए तो मैं ज़ोर दे रहा हूँ कि कबीर की कुचेष्टाओं को तुरन्त कुचल दिया जाय। ऐसा न हो कि किसी विदेशी शासक को हमारे ऊपर हमला करने का बहाना मिल जाय।

सेनापति—[ ज़मीन चूमकर ] जहाँपनाह, आप इसकी चिन्ता न करें। किस की मजाल है कि दिल्ली के बादशाह की ओर आँख उठाकर भी देख ले। ( तलवार की ओर देख कर ) जब तक मेरे हाथ में यह तलवार है, हुज़ूर अपने दुश्मनों का सिर धड़ से जुदा ही समझें। हमारी सेना स्वामिभक्त है। एक-एक सैनिक अपने बादशाह के लिए कट मरने को तय्यार है। दुश्मनों को हिन्दुस्तान की भूमि में दाखिल होने से पहले ही कुचल दिया जायगा ( तलवार के दो चार हाथ दिखाता है। सब उपस्थित लोग वाहवाह करते हैं)

बादशाह—[ सेनापति से ] सेनापतिजी ! मुझे अपने वीर सैनिकों पर पूरा भरोसा है। हमने अपनी जान और अपना मान आपके हाथों सौंप दिया है। फिर भी जहाँ तक हो सके लड़ाई झगड़ों से बचना चाहिए।

प्रधान मन्त्री—( हाथ जोड़कर ) जहाँपनाह, यदि आज्ञा हो तो मैं भी कुछ कहूँ।

बादशाह—हाँ कहिए। मैं भी जानना चाहता हूँ कि इस बारे में आपकी क्या राय है, क्योंकि आपसे अधिक अनुभवी इस दरबार में और कोई भी नहीं।

प्रधान मन्त्री—गरीबपरवर! गुस्ताखी मुआफ़। मेरी राय में तो कबीर को दंड देने में जल्दी नहीं करनी चाहिए। इस विषय में बहुत कुछ सोच विचार की आवश्यकता है।

क़ाज़ी—मन्त्रीजी, इसमें सोचने और विचारने की कौन सी बात है। इस्लाम और कुफ़र की लड़ाई है। हम किसी काफ़िर को फलने-फूलने का मौक़ा नहीं दे सकते।

प्रधान मन्त्री—मैं कब कहता हूँ कि काफ़िरों को फलने-फूलने दिया जाय। मैं तो केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि बादशाह को बहुत उदार होने की आवश्यकता है। राजा और प्रजा का सम्बन्ध पिता और पुत्र का है। जिस राज्य में प्रजा के लोगों को धार्मिक स्वतन्त्रता नहीं होती, उस राज्य की स्थिरता सन्दिग्ध हो जाती है।

शाही इमाम—प्रधान मन्त्री के मुख से ऐसी कायरता की बातें हमने पहले कभी नहीं सुनी। आज पता लगा कि आपके ऊपर भी कबीर का रंग चढ़ा हुआ है और उसने आपको भी बेदीन कर दिया है।

प्रधान मन्त्री—तोबा! अल्ला रहम करे। मैं बेदीन क्यों होने लगा। मैं क्या जानूँ कि वह निगोड़ा कबीर कौन है। हाँ, बीस वर्ष के अनुभव ने मुझे यही बताया है कि राजा को बहुत उदार होने की आवश्यकता है। खासतौर पर ऐसे नाज़ुक वक्त में। एक ओर राजपूतों का सैन्यसंगठन

बढ़ता जा रहा है, दूसरी ओर मुसलमानों में फूट के अंकुर दिन प्रतिदिन बढ़ते जा रहे हैं। मुलतान का हाकिम पहले ही दिल्ली दरबार से नाता तोड़ चुका है। बंगाल और दक्षिण के नवाब भी बहुत कुछ निडर हो चुके हैं। बाहर के देश हिन्दुस्तान की एक-एक घटना से परिचित हैं और सब इस ताक में हैं कि कब इस सोने की चिड़िया को अपने चङ्गुल में फंसा लिया जाय।

सेनापति—मैं पहले ही कह चुका हूँ कि किसी भी आक्रमणकारी की चिन्ता न की जाय। बादशाह सलामत जिस बात को ठीक समझते हैं उसे बेखटके करें। हम बाहर और भीतर के दोनों शत्रुओं से स्वयं निपट लेंगे। राजपूतों का सैन्य संठगन क्या खाक होगा। उनके तो आपस के झगड़े ही खतम नहीं होते। उनको आपस में लड़ाना हमारे लिए बाएँ हाथ का खेल है। बाकी रही मुलतान, बंगाल और दक्षिण के हाकिमों की बात, सो केवल बादशाह सलामत की आज्ञा की देर है। फिर आप देखेंगे कि उनको दिल्ली के शाहन्शाह से बगावत करने का कैसा मजा चखाया जाता है।

बादशाह—कुछ दिनों तक हमारा दरबार काशी में लगेगा। वहीं इस बात का फैसला किया जायगा कि कबीर को क्या सजा दी जाय। अभी इस विषय को स्थगित किया जाता है।

[ नेपथ्य में नक्कारे की ध्वनि। भोजन के समय की सूचना पाकर बादशाह का उठना और दरबार का बरखास्त होना ]

पर्दा गिरता है।

———×———×———×———×

## दूसरा दृश्य

[ स्थान काशीधाम। समय रात्रि का पहला पहर। कबीर अपने करघे पर बैठे हुए बुन रहे हैं और साथही गा रहे हैं। ]

कबीर—[ गाते हैं ]

रे मन बैठि किते जिनि जासी।
हिरदै सरोवर है अविनासी॥
काया मधे काटि तीरथ, काया मधे कासी।
काया मधे कमलापति, काया मधे बैकुंठ बासी॥
उलटि पवन षट चक्र निवासी, तीरथराज गंगतटवासी॥
गगनमंडल रवि ससि दोइतारा, उलटी कूँची लागि किवारा॥
कहै कबीर भई उजियारा, पंच मारै एक रह्यो नियारा॥

[ लोई का प्रवेश ]

लोई—प्राणनाथ! चारों ओर आपके शत्रु ही शत्रु छा रहे हैं, और आपको तनिक भी परवाह नहीं।

कबीर—लोई! संसार में चिन्ता की कोई बात नहीं। संसार में सदा कोई नहीं रहता। केवल अविनाशी भगवान ही अमर है। जब संसार का यह जीवन नश्वर है तो इसकी रक्षा की विशेष चिन्ता नहीं करनी चाहिए।

लोई—महाराज, चिन्ता क्यों नहीं करनी चाहिए। कमाल और कमाली, दोनों जवान हो गए हैं उनके विवाह का भी ख्याल कीजिए।

कबीर—मैं कमाल के कामों से सन्तुष्ट नहीं। उसके जीवन में वैराग्य और त्याग की मात्रा बहुत ही कम है। उसे सदा धन की चिन्ता ही सताए रहती है।

लोई—महाराज, यदि कमाल भी आपकी तरह त्यागी हो जाता

तो सारा कुटुम्ब कभी का भूखा मर गया होता। शायद आपको पता नहीं कि कमाल की धन-चिन्ता ने ही सारे घर को कंगाली के नग्न-नृत्य से बचाया है।

कबीर—यह मैं मानता हूँ कि कमाल धन कमाने में निपुण है। यह भी मैं जानता हूँ कि जब से कमाल कमाने लगा है कुटुम्ब का आर्थिक संकट दूर हो गया है। किन्तु, लोई सुनो! मनुष्य का परम ध्येय धन कमाना नहीं। धन तो प्रभु से विमुख करनेवाली वस्तु है। मनुष्य को पेट भरने की कभी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। वह घट-घट व्यापी प्रभु कीड़ा कुँजर सबको भोजन देनेवाला है। पत्थर में कीड़ा है उसकी सुध वही लेता है। शिशु को माता के पेट में भोजन पहुँचानेवाला वही है। शिशु के उत्पन्न होते ही माता के स्तनों में दूध भेज देता है। भला जब तीनों भुवनों का राजाधिराज परमात्मा सबके मनोरथों को पूरा करनेवाला है तो किसी को क्या चिन्ता पड़ी कि अपने मनोरथ की पूर्ति के लिए इतनी दौड़ धूप करता फिरे।

लोई—यह ठीक है कि भगवान सबको भोजन देनेवाले हैं और सबकी कामनाओं को पूर्ण करनेवाले हैं। किन्तु प्रयत्न के बिना भगवान भी किसी के मनोरथ पूरे नहीं करते। भगवान् केवल उन्हीं की सहायता करते हैं जो कि अपनी सहायता स्वयं करते हैं। आप स्वयं कहा करते हैं कि आत्मा से ही आत्मा का उद्धार हो सकता है। इसका मतलब भी यही है कि मनुष्य स्वयं अपना उद्धार कर सकता है।

कबीर—लोई, तुम सत्य कहती हो। किन्तु स्त्रियों का स्वभाव ही कुछ अधिक चिन्ता करने का होता है। मेरी माता भी सदा तुम्हारी तरह चिन्ता से व्याकुल रहती थीं।

[कमाल का प्रवेश। माता-पिता को नमस्कार]

लोई--पुत्र, कहो कैसे आये, क्या पिताजी से कोई विशेष काम है

कमाल--नहीं माताजी, ऐसे ही पिताजी के दर्शन करने के लिए आ गया हूँ।

लोई--कोई और भी विशेष समाचार है या नहीं, मेरे लाल ?

कमाल--माताजी, बातें तो बहुत सुनने में आ रही हैं। सुना है कि लोगों ने पिताजी के विरुद्ध बादशाह के कान भी भरे हैं। शहर में मुल्लाओं ने बहुत ऊधम मचा रक्खा है। कोई ऐसी मस्जिद नहीं जहाँ जुमे की नमाज़ के बाद पिताजी के खिलाफ ज़हर न उगला जाए। इधर बहुत से हिन्दू भी पिताजी के प्राणों के प्यासे दिखाई दे रहे हैं। मारवाड़ी मन्दिर का पुजारी सदा पिताजी को गालियाँ देता है। गयाघाट के पंडे इन्हें पीटने की तय्यारियाँ कर रहे हैं। कहाँ तक कहूँ, चारों ओर विपत्तियों की घटाएँ छाई हुई दिखाई दे रही हैं।

[ कमाली का प्रवेश। कबीर के चरणों पर गिरकर रोने लगती है। सब सहम जाते हैं। ]

कबीर--(गले लगाकर) पुत्री, क्या बात है ? तुम क्यों रोती हो ?

कमाली--(सिसकियाँ भरती हुई ) पिताजी, यहाँ से निकल चलो।

कबीर--क्या बात है पुत्री ?

कमाली--यहाँ रहना खतरे से खाली नहीं पिताजी ! चारों ओर आपके शत्रु ही शत्रु दिखाई दे रहे हैं। शाही मस्जिद के इमाम की लड़की आज ही मुझे मिली थी। वह मेरी सहेली है। उसने बहुत सी अनिष्ट की बातें सुनाई हैं।

कबीर--वह क्या कहती है ?

कमाली--( गला रूँध जाता है ) यही कि ( फिर रोने लगती है )।

कबीर—बेटी धीरज धरो। घबराने की आवश्यता नहीं। जो कुछ सुना है साफ-साफ कहदो।

कमाली—( आँसू पोंछकर ) यही कि शहर के हिन्दुओं और मुसलमानों ने मिलकर आपकी जीवनलीला को समाप्त करने का षडयन्त्र किया है। बादशाह तक आपकी शिकायतें पहले ही पहुँच चुकी हैं। कुछ दनों तक यहाँ दरबार होगा। उस समय य लोग झूठी सच्ची शिकायतें करेंगे। बादशाह के क़ाज़ी ने इन्हें आश्वासन दिया है।

लोई—ऐसी हालत में यहाँ से चला जाना ही अच्छा है। शीघ्रता करनी चाहिए। ज़िन्दगी रही तो कहीं और कमाकर खा लेंगे।

कमाल—अब यहाँ से भाग जाना ही अच्छा है। हमें पूर्ण विश्वास है कि हम भेष बदलकर कहीं न कहीं छिपने में अवश्य सफल हो जायँगे। फिर हमें कोई भी नहीं पहचान सकेगा। विपत्ति के दिन टलने पर फिर लौट आयँगे।

कमाली—कब चलोगे पिताजी ?

लोई—देखो एक दो दिन में निकलने का ढंग सोचेंगे। निकल भागना कोई आसान काम तो नहीं।

कमाल— हमें एक-एक करके यहाँ से निकलना चाहिए।

लोई—यही मेरी भी सलाह है।

कमाली—पहले पिताजी को यहाँ से निकाल देना चाहिए।

कबीर—[ गम्भीरता से ] जिसे जान प्यारी हो, वह तुरन्त यहाँ से भाग जाये। कायरों के लिए यहाँ से कोई स्थान नहीं है कबीर यहीं रहेगा और सहर्ष हर प्रकार के कष्टों को झेलेगा। मैं सत्य का प्रचार प्राणों के मोह से छोड़ नहीं देना चाहता इन नश्वर और तुच्छ प्राणों के लिए सत्य स्वरूप भगवान को अप्रसन्न नहीं किया जा सकता।

[ कबीर के इन शब्दों से सन्नाटा छा गया और सब अवाक् रह गए। ]

कबीर—अब तुम सब जाओ क्योंकि मैं सोना चाहता हूँ।

( सबका प्रस्थान )

पर्दा गिरता है।

× ——— × ——— × ——— ×

## तीसरा दृश्य

[ स्थान काशीधाम। समय सायकाल। कुछ भक्त गंगा के किनारे घूम रहे हैं। ]

एक भक्त—सुना है कि कल बादशाह का दरबार यहाँ लगेगा।

दूसरा भक्त—हाँ, बादशाह का डेरा डण्डा कल प्रातःकाल ही यहाँ पहुँच जायगा। सारे शहर को सजाया जा रहा है। महाराजा के बाग में बादशाह के ठहरने का प्रबन्ध किया गया है।

तीसरा भक्त—दरबार क्या खाक लगेगा। बेचारे कबीर-भक्त की जान पर आफत आयगी।

चौथा भक्त—सुना तो हमने भी ऐसा ही है।

तीसरा भक्त—आज सारे शहर में ऐसा कौन है जिसके कानों तक यह बुरा समाचार न पहुँच गया हो।

पहला भक्त—सबसे बड़ो दुःख की बात तो यह है कि हिन्दू भी उस बेचारे के पीछे हाथ धोकर पड़े हुए हैं। उसने हिन्दुओं के लिए अपना दीन ईमान सब कुछ छोड़ा, किन्तु हिन्दुओं ने उसको यह बदला दिया।

तीसरा भक्त—हिन्दुओं के लिए यह कोई नई बात थोड़े ही है। इनका तो यह दस्तूर ही बन गया है कि जो इनके ऊपर मरे उसे मारने को दौड़ते हैं और जो इनको मारे उसके पैर चूमते फिरते हैं।

चौथा भक्त—यदि कोई हिन्दू इस तरह मुसलमानों में जाता तो फिर देखते कि मुसलमान किस तरह उसके लिए अपनी जान तक कुर्बान नेरक को तय्यार होते हैं।

पहला भक्त—यदि हिन्दुओं में यह दोष न होता तो आज हिन्दू इस प्रकार पददलित और पराधीन क्यों होते ?

तीसरा भक्त—हिन्दुओं ने सदा अपनों को ठुकराया है।

दूसरा भक्त—भई, पहले तो मैं भी कबीर के विरुद्ध था, क्योंकि उन्होंने वेदों और शास्त्रों की निन्दा की है। मैं इसको सहन नहीं कर सकता। किन्तु जबसे मैंने उनके विरुद्ध षड्यन्त्र का हाल सुना है, तब से मेरी सहानुभूति उनके साथ हो गई है।

चौथा भक्त—भई ! चाहे कबीर ने वेदों और शास्त्रों की निन्दा की हो, किन्तु वे हैं तो हिन्दू। उनकी सहायता करना सब हिन्दुओंका परम कर्त्तव्य है।

पहला भक्त—आपकी बात सत्य है। हिन्दू-धर्म बड़ा विशाल है। इसमें भिन्न विचारों के लोग समाविष्ट हो सकते हैं। वेदों और शास्त्रों के माननेवाले भी हिन्दू हैं, तथा वेदों और शास्त्रों की निन्दा करनेवाले भी हिन्दू हैं। परमात्मा को माननेवाले आस्तिक भी हिन्दू हैं और परमात्मा को न माननेवाले नास्तिक भी हिन्दू हैं। विष्णु के उपासक भी हिन्दू हैं और शिवजी के उपासक भी हिन्दू। देखते नहीं कि बौद्धों और जैनों ने भी वेदों और शास्त्रों की निन्दा की है। क्या वे हिन्दू नहीं ? नाथ लोग तथा अन्य बहुत से सन्त लोग भी वेदों तथा शास्त्रों को उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं किन्तु वे सब हिन्दू हैं, हिन्दू जाति के अंग हैं सब हिन्दुओं को एक होकर एक दूसरे की सहायता करनी चाहिए।

तीसरा भक्त—यदि हिन्दू जाति इस रहस्य को समझ ले तो फिर कहना ही क्या। हमारे पूर्वजों ने और हमारे शास्त्रों ने चिल्ला-चिल्लाकर कहा है कि धर्म को संकीर्ण नहीं होने देना चाहिए किन्तु हम अभी तक इस तत्व को नहीं समझे।

दूसरा भक्त—अब तो बहुत उदार होने की आवश्यकता है। जो व्यक्ति हिन्दुस्तान को अपनी मातृभूमि समझे, हिन्दी भाषा को अपनी मातृभाषा माने और हिन्दू सभ्यता से प्रेम रक्खे, बस वह हिन्दू है। विशाल हिन्दू धर्म की यही परिभाषा होनी चाहिए। यदि कोई हिन्दू गौण सिद्धान्तों से मतभेद रखता है तो इसका यह मतलब नहीं कि वह हिन्दू ही नहीं रहा।

पहला भक्त—अब हिन्दू धर्म की परिभाषा पर विवाद करने का समय नहीं। अब तो यह सोचिए कि एक निरपराध हिन्दू के प्राण किस प्रकार बचाए जा सकते हैं।

तीसरा भक्त—केवल यहाँ से भाग जाने में ही कबीर की मुक्ति है।

चौथा भक्त—भागकर भी कहाँ जा सकता है और कबतक छिपकर वह रह सकता है। हिन्दू लोग ही उसको स्वयं पकड़वा देंगे।

पहला भक्त—कबीर से यह आशा भी तो नहीं की जा सकती कि वह प्राणों के लोभ से कहीं भाग जायगा।

दूसरा भक्त—तो आओ, कबीर के पक्ष में आन्दोलन करें।

तीसरा भक्त—प्रथम तो अब आन्दोलन का समय नहीं रहा। कल प्रातःकाल ही फैसला हो जाना है। दूसरी बात यह है कि बादशाह बड़ा सख्त है, आन्दोलन करनेवालों से बुरी तरह बदला लेगा।

[ इतने में एक राज कर्मचारी उधर से गुजरता है। उसको देखकर सब नौ-दो-ग्यारह हो जाते हैं। ]

पर्दा गिरता है

× ——— × ——— × ——— ×

## चौथा दृश्य

[ स्थान काशीधाम। समय प्रातःकाल। सिकन्दर लोदी का दरबार। सब दरबारी यथास्थान बैठे हुए हैं और अन्दर शहर के राजभक्तों की भी भारी संख्या विद्यमान है ]

बादशाह—मालूम होता है कि कबीर की शरारतें बहुत ज्यादा बढ़ गई हैं। काशी के लोग भी उससे बहुत तंग हैं। अब तक तो मैं यही समझता था कि केवल मुसलमानों को ही उसके खिलाफ शिकायतें हैं; किन्तु यहाँ आकर पता चला कि हिन्दू तो मुसलमानों से भी अधिक उसके विरुद्ध हैं। यह मेरे हाथ में यहाँ के गण्यमान्य लोगों का पेश किया हुआ मेमोरियल है जिसमें दो सौ नागरिकों के हस्ताक्षर हैं और इनमें अधिक संख्या हिन्दुओं की है।

क़ाज़ी—जहाँपनाह, मैंने तो पहले ही अर्ज की थी कि यह बड़ा खतरनाक आदमी है। यदि इसको ठीक समय पर न रोका गया तो भयंकर परिणाम की आशंका है।

बादशाह—अब हम जल्दी ही इसका कुछ न कुछ इन्तजाम करेंगे।

शेख तक़ी—[ सम्मानपूर्वक ] यदि आज्ञा हो तो मैं भी कुछ कहूँ।

बादशाह—अवश्य, अवश्य। पीरजी को आज्ञा लेने की क्या आवश्यकता।

शेख तक़ी—यह शख्स कबीर, कहने को तो अपने आपको सूफी कहता है। इसीलिए बहुत से भोले-भाले मुसलमान इसके

जाल में फँस गये हैं। लेकिन असल में यह पूरा काफ़िर है। जब यह मुझे मानिकपुर में मिला तो मैं उसी समय सब कुछ भाँप गया था। लेकिन मैंने यह सोचकर हुज़ूर से शिकायत नहीं की थी कि शायद खुद ही सीधे रास्ते पर आ जायगा। अब यह अच्छा हुआ कि हुज़ूर को भी सारे मुआमले का पता चल गया।

बादशाह—अब हम इसे बिलकुल ठीक कर देते हैं। न रहेगा बाँस और न बजेगी बाँसुरी। ( कोतवाल से ) जाओ, उसको अभी पकड़कर हमारे सामने पेश करो।

कोतवाल—( झुककर ) जो आज्ञा हुजूर ( कुछ सिपाहियों के साथ जाता है। )

बादशाह—( शेख तक़ी से ) पीरजी, यदि आज्ञा हो तो महफिल को गर्म किया जाय।

शेख तक़ी—जहाँपनाह, क्या हर्ज है।

बादशाह—( क़ाज़ी से ) हाँ काज़ी साहब, बुलाओ उन नर्तकियों को। शराब की बोतलें भी मँगवालो। जो पीना चाहे उसे दे दो। किसी के साथ जबरदस्ती नहीं।

क़ाज़ी—जो आज्ञा, जहाँपनाह।

[ नर्तकियों का प्रवेश। शराब का दौर ]

बादशाह—( काज़ी को पास बुलाकर, कान में ) इस काशीवाली नर्तकी गुलबदन को साथ दिल्ली ले चलेंगे। इसने तो नाचने में कमाल कर दिया।

क़ाज़ी—जहाँपनाह ! मैं महाराजा से कह दूँगा कि बादशाह सलामत की यह इच्छा है। वह तो आपको यह भेंट देकर अपने आपको कृतकृत्य समझेगा।

[ कोतवाल का प्रवेश ]

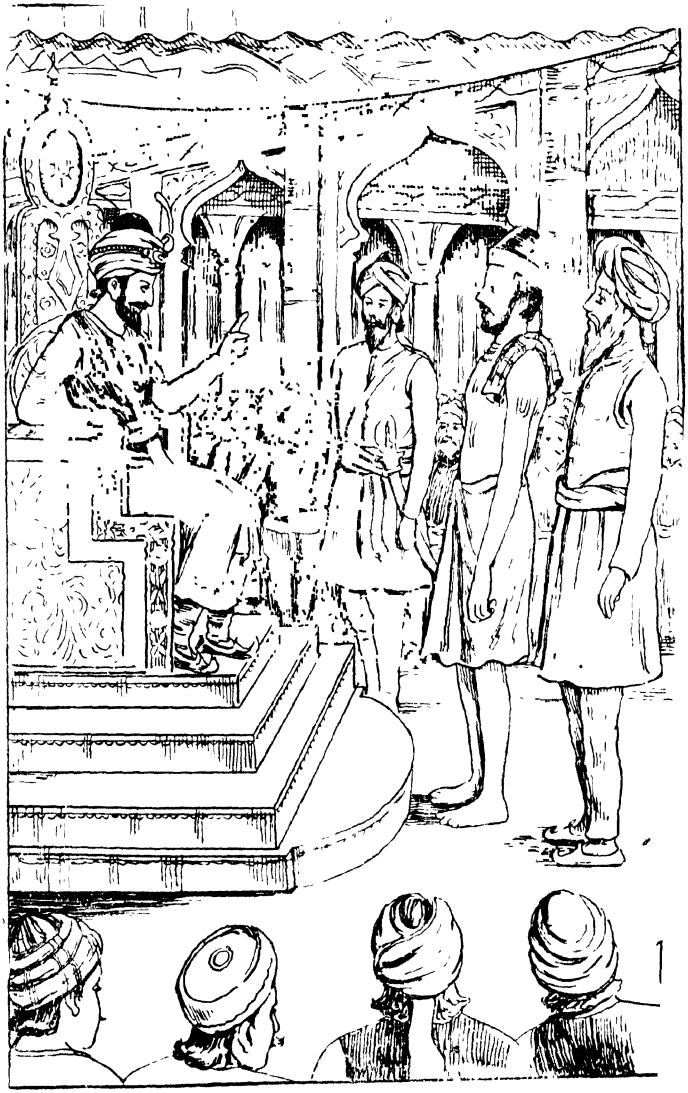

सिकन्दर लोदी के दरबार में सन्त कबीर

जाल में फँस गये हैं। लेकिन असल में यह पूरा काफ़िर है। जब यह मुझे मानिकपुर में मिला तो मैं उसी समय सब कुछ भाँप गया था। लेकिन मैंने यह सोचकर हुज़ूर से शिकायत नहीं की थी कि शायद खुद ही सीधे रास्ते पर आ जायगा। अब यह अच्छा हुआ कि हुज़ूर को भी सारे मुआमले का पता चल गया।

बादशाह—अब हम इसे बिलकुल ठीक कर देते हैं। न रहेगा बाँस और न बजेगी बाँसुरी। ( कोतवाल से ) जाओ, उसको अभी पकड़कर हमारे सामने पेश करो।

कोतवाल—( झुककर ) जो आज्ञा हुजूर ( कुछ सिपाहियों के साथ जाता है। )

बादशाह—( शेख तक़ी से ) पीरजी, यदि आज्ञा हो तो महफ़िल को गर्म किया जाय।

शेख तक़ी—जहाँपनाह, क्या हर्ज है।

बादशाह—( क़ाज़ी से ) हाँ काज़ी साहब, बुलाओ उन नर्तकियों को। शराब की बोतलें भी मँगवालो। जो पीना चाहे उसे दे दो। किसी के साथ जबरदस्ती नहीं।

क़ाज़ी—जो आज्ञा, जहाँपनाह।

[ नर्तकियों का प्रवेश। शराब का दौर ]

बादशाह—( काज़ी को पास बुलाकर, कान में ) इस काशीवाली नर्तकी गुलबदन को साथ दिल्ली ले चलेंगे। इसने तो नाचने में कमाल कर दिया।

क़ाज़ी—जहाँपनाह ! मैं महाराजा से कह दूँगा कि बादशाह सलामत की यह इच्छा है। वह तो आपको यह भेंट देकर अपने आपको कृतकृत्य समझेगा।

[ कोतवाल का प्रवेश ]

सिकन्दर लोदी के दरबार में सन्त कबीर

कोतवाल—( भूमि चूमकर ) जहाँपनाह, अपराधी हाज़िर है।

बादशाह—( अंगड़ाई लेकर ) पेश करो।

[सन्त कबीर गम्भीर मुद्रा के साथ सिर झुकाकर बादशाह के सामने खड़े हो गये। उनके चेहरे पर चिन्ता-शोक का कोई चिह्न न था।]

बादशाह—तुम्हारा नाम कबीर है ?

कबीर—जी हाँ।

बादशाह—क्या तुमने लोगों को बेदीन किया है ?

कबीर—नहीं, अपितु सच्चे दीन पर चलाया है।

बादशाह—यह लोग तुम्हारे खिलाफ क्यों शिकायतें करते हैं ?

कबीर—स्वार्थी लोग सदा सुधार के विरोधी रहे हैं। उनका लाभ इसी बात में है कि संसार के लोग अन्धविश्वास में पड़े रहें और अपनी बुद्धि से तनिक भी काम न लें। स्वार्थी लोगों ने सुकरात को जहर का प्याला पिलाया, ईसा मसीह को फांसी के तख़्ते पर लटकाया; मुहम्मद साहब को तरह-तरह के कष्ट दिये, शंकराचार्य के प्राण इन्होंने ही लिये।

बादशाह—क्या तुमने बहुत-से भोले-भाले मुसलमानों को हिन्दू धर्म में शामिल नहीं किया ?

कबीर—मेरी दृष्टि में हिन्दू और मुसलमान का कोई भेद ही नहीं है।

बादशाह—क्या तुमने इस्लाम धर्म के विरुद्ध कुछ नहीं कहा ?

कबीर—अवश्य कहा है लेकिन मुसलमानों के विरुद्ध कहा है। मुसलमानों में बहुत सी कुरीतियाँ हैं। एक सुधारक का यह परम कर्तव्य है कि वह हर प्रकार की कुरीतियों के विरुद्ध आवाज़ उठाये।

बादशाह—तुम्हें पता है कि इसका नतीजा क्या होगा ?

कबीर—सच्चे सुधारक कर्म में ही अपना अधिकार समझते हैं ;

परिणाम की उन्हें विशेष चिन्ता नहीं होती। फल देना भगवान् के अधिकार में है। अच्छे कामों का परिणाम सदा अच्छा ही होता है और बुरे कामों का परिणाम सदा बुरा होता है।

बादशाह--इसका परिणाम होगा, तुम्हारी मृत्यु! क्या तुम मौत से नहीं डरते?

कबीर--मौत से डरते हैं कायर और आत्मा को न जाननेवाले पाखंडी। आत्मा अमर है, उसे कोई नहीं मार सकता। यह पांच भूतों का बना हुआ शरीर किसी न किसी दिन स्वयं नष्ट हो जायगा। यदि इसे नष्ट करके तुम्हें शान्ति मिल सकती है तो बड़ी खुशी से नष्ट कर दो।

बादशाह--यदि तुम मुआफी मांगकर मुसलमान हो जाओ तो तुम्हारी जान बख्शी जा सकती है।

कबीर--(तमतमाकर) तुमसे मुआफी मांगकर भगवान के सामने क्या मुँह दिखाऊँगा। मैंने जो कुछ किया है प्रेरणा से किया है। भगवान् मेरे कार्य से प्रसन्न हैं। मैं तुम्हें प्रसन्न करने के लिए भगवान् को नाराज नहीं कर सकता। सच्चे सुधारक अपने पथ से च्युत नहीं हो सकते। मृत्यु का भय या संसार का प्रलोभन उन्हें मार्गभ्रष्ट नहीं कर सकता। अभी कल की ही तो बात है कि मन्सूर फांसी के तख्ते पर चढ़ गया किन्तु अपने सिद्धान्त को न छोड़ा। फांसी के तख्ते पर चढकर भी उसने अनलहक़ (मैं सत्य हूँ) का नारा लगाया।

बादशाह--तुम बहुत ज्यादा गुस्ताख होते जा रहे हो। अपने बादशाह से भी नहीं डरते?

कबीर--मेरा बादशाह वह है जिसके राज में तुम जैसे शराबियों और कबाबियों की कोई पूछ नहीं। तुम मुझे मौत का

भय देकर नहीं धमका सकते । तुम्हारा आखरी हथियार मृत्युदंड है । इससे अधिक और तुम क्या कर सकते हो ?

बादशाह—( लाल-पीला होकर ) अच्छा, तुम्हें मृत्यु-दंड दिया जाता है । जिस किसी से मिलना हो मिल लो और जो कहना हो कहलो ।

कबीर—जिससे मिलना है, वह मेरा प्रभु हाथ पसारे खड़ा है । इस शरीर के बन्धन ने मेरे और मेरे स्वामी के मध्य रुकावट की दीवार खड़ी कर रक्खी थी । अहा ! आज इस शरीर के नष्ट होने पर अपने प्रीतम की गोद में चला जाऊँगा ।

बादशाह—(शेख तक़ी से)यह कैसी बहकी-बहकी बातें कर रहा है ?

शेख तक़ी—जहाँपनाह, मौत की सज़ा सुनकर इसका होश उड़ गया है । इसलिए इस प्रकार की बे सिर-पैर की बातें कर रहा है ।

बादशाह—( काज़ी से ) काज़ी साहब, इसको गंगा में डुबवा दो । बस यही इस काफिर के अपराधों की सज़ा है ।

काज़ी—( कोतवाल से ) जाओ, जल्लादों को हुक्म दो कि गंगा में डुबोकर इसे मारदें ।

कोतवाल—जो आज्ञा । ( जाता है । )

[ कबीर का हाथ-पैर बँधवाकर गंगा में फिकवाना और उनका जल समाधि लगाकर पानी पर तैरना । कोतवाल का प्रवेश ]

कोतवाल—( हाथ जोड़कर ) जहाँपनाह, एक बड़े ही आश्चर्य की बात हुई । ज्योंही उस अपराधी को हाथ-पैर बाँधकर गंगामें फेंका गया, वह झटसे पानीके ऊपर आसन जमाकर बैठ गया।

बादशाह—( काज़ी से ) काज़ी साहब, यह क्या कोई करामात है ?

काज़ी—( आदरपूर्वक ) हुज़ूर, करामात कोई नहीं । ऐसा मालूम होता है कि काफ़िर अच्छा तैराक है । इसको डुबोने की सज़ा नहीं देनी चाहिए ।

इमाम—हुजूर गंगाके किनारेके लोग प्रायःहोते ही अच्छे तैराक हैं।

प्रधान मन्त्री—( हाथ जोड़कर ) जहाँपनाह, इस अपराधी को अपने साथ दिल्ली ले चलिए। वहाँ जाकर जो सज़ा मुनासिब हो दीजिए।

क़ाज़ी—इससे लोगों में बेचैनी फैल जायगी।

बादशाह—मेरा भी यही ख़याल है। शायद लोग यह कहने लगें कि बादशाह कबीर की करामात से डर गया है।

क़ाज़ी—आप आज्ञा दीजिए। मैं अभी इस काफिर की जिन्दगी को ख़तम कर देता हूँ। इसे मस्त हाथी से तुड़वा देना चाहिए। बस यही इसका इलाज है।

बादशाह—जाओ, जैसी तुम्हारी इच्छा हो करो।

[ कजी जाता है। कबीर को बँधवाकर मस्त हाथी के सामने डलवा दिया गया। काज़ी की आज्ञा से महावत ने हाथी को कबीर के ऊपर रेल दिया। किन्तु हाथी सूंघकर चिंघाड़ मारता हुआ पीछे भाग गया। तीन बार इसी प्रकार किया गया। तीसरी बार हाथी काबू से बाहर होकर महावत को लेकर भाग गया।]

क़ाज़ी—(घबराकर) जहाँपनाह, बड़े आश्चर्य की बात है। हाथी भी उसे नहीं मारता पता। नहीं काफ़िर ने क्या जादू कर रक्खा है।

बादशाह—( व्याकुल होकर ) काज़ी साहब, क्या बात है ? हो न हो, अवश्य कोई करामात है।

क़ाज़ी—जहाँपनाह, ऐसा मालूम होता है कि इस काफिर ने जिनों और भूतों को अपने कब्ज़े में कर लिया है।

बादशाह—( शेख तक़ी से ) पीरजी, क्या आप इसका कोई इलाज बता सकते हैं ?

शेख तक़ी—बादशाह सलामत, कुछ समझ में नहीं आता।

बादशाह—(काज़ी से) जाओ, इसे छोड़ दो। मेरे सिर में दर्द है। अब मैं कुछ आराम करना चाहता हूँ।

( बादशाह के उठते ही दरबार का विसर्जन )

पर्दा गिरता है।

× ——— × ——— × ——— ×

## पाँचवाँ दृश्य

[स्थान काशीधाम। कबीर का घर। समय मध्याह्न से पूर्व। लोई बैठी हुई सोच रही है ]

लोई—( अपने आप ) हा! आखिर वह दिन आ पहुँचा जिसका वर्षों से डर था। आज शत्रुओं के घर घी के दीपक जल रहे होंगे। मुल्ला और मौलवी तथा पंडित और पुजारी खूब प्रसन्न हो रहे होंगे। प्राणनाथ, मैंने तुम्हें कितनी बार समझाया कि सारी दुनिया से दुश्मनी मोल न लो। यदि तुम्हें मेरा कोई खयाल नहीं है तो न हो, कम से कम अपने पुत्र और अपनी पुत्री का तो ख्याल करना था। भगवन्, केवल तुम्हीं मेरे रक्षक हो। मैंने कोई अपराध नहीं किया, फिर मुझे यह दिन क्यों दिखाया? मेरे स्वामी भी सत्यवादी महा पुरुष हैं। हे भगवन्, उनकी मुसीबतें मेरे ऊपर डाल दे। पता नहीं, आज मेरे प्रीतम को क्या दंड मिला होगा ( कुछ सोचकर)हा मैं क्या सोच रही हूँ। ऐसा कदापि नहींहो सकता। मेरे प्रीतम सदा के लिए मुझसे जुदा न होंगे। उनका अपराध इतना सख्त नहीं है। क्या बादशाह न्याय को बिलकुल तिलांजलि दे देगा? कमाल अपने पिता का समाचार लाने के लिए कभी का गया हुआ है। अभी तक नहीं आया। पता नहीं क्या कारण है। कहीं दुश्मनों ने मेरे लाल को भी तो नहीं पकड़ लिया। ( सहसा कमाल का प्रवेश ) आओ मेरे लाल, आओ। तुम्हारे पिताजी नहीं आये? शायद पीछे आ रहे होंगे।

कमाल--माताजी, धीरज धारण करो।

लोई--हाँ बेटा,( धीरज धारण करके बैठ जाती है ) । एक बार अपने मुख से कह दो कि पिताजी आ रहे हैं, फिर तुम्हें तंग न करूँगी।

कमाल--माताजी, धीरज धारण करो।

( कमाली का प्रवेश )

कमाली--भैया क्या सन्देश लाए हो ? पिताजी कहाँ हैं ? मेरी तो बाईं आँख फड़क रही है। पिताजी अवश्य आरहे हैं।

लोई--मेरी भी बाईं आँख फड़की है। शकुन तो शुभ हो रहे हैं। पता नहीं, कमाल कुछ शुभ समाचार क्यों नहीं सुनाता।

कमाल--माताजी, कह तो रहा हूँ, धारज धारण करो। जो कुछ भाग्य में था, वह हो गया है।

लोई--बेटा, तुम्हारी इन अटपटी बातों से मेरी व्याकुलता बढ़ रही है। तुम साफ-साफ क्यों नहीं कहते कि क्या मुआमला है

कमाल--माताजी, साफ-साफ क्या खाक कहूँ। जो विधाता को मंजूर था वह हो गया है--पिताजी को मृत्यु दंड मिला है।

लोई--हा प्राणनाथ। ( बेहोश हो जाती है )

कमाली--हा पिता ( माता के चरणों पर गिर जाती है )

कमाल--( आपही आप ) ओह ! इस घर का कितना दुःखमय अन्त होगा। अबतक पिताजी तो धर्म की वेदी पर कुर्बान हो ही चुके होंगे। इस भारी दुःख के कारण माताजी और बहन का जीवन भी संदिग्ध हो गया है। इनमें इतना दुःख सहने की क्षमता कहाँ ? सारे खानदान को खपाकर मैं अकेला पापी किसको मुँह दिखाऊँगा। अब मेरे लिए एक ही मार्ग है, वह है आत्महत्या। दुःखियों और निराशों का एक

मात्र सहारा आत्महत्या ही है। बस अब, मैं किसी को मुँह न दिखाऊंगा।

( कबीर का प्रवेश )

कमाल—( चौंककर ) हैं ! पिताजी आप कहाँ से आगये ? क्या मैं स्वप्न देख रहा हूँ। यह क्या होगया ? आपको मौत के मुँह से बचानेवाला कौन है ? ( पैरों पर गिर पड़ता है )

कबीर—बेटा, मारनेवाले की दो भुजाएँ हैं और रक्षा करनेवाले की हज़ार। जिसके सिर पर भगवान का हाथ हो, भला उसे कौन मार सकता है। ( देखकर ) हैं यह क्या हुआ ? लोई और कमाली बेहोश क्यों पड़ी हैं ?

कमाल—पिताजी, आपके दुःखद समाचार को न सह सकने के कारण इनकी यह दशा हो गई है।

कबीर—जाओ, पानी लाओ। मैं इन्हें ठंढी हवा करता हूँ।

[ पानी के छींटे देने और पंखा करने से लोई का होश में आना ]

लोई—( देखकर ) ओह ! यह क्या है ! यह तो मेरे स्वामी का भूत मेरे सामने नाच रहा है। प्राणनाथ, घबराओ मत। मैं भी आपके साथ ही आ रही हूँ। शीघ्र ही स्वर्ग में आप से भेंट होगी।

कबीर—प्रिये ! क्या तुम मुझे नहीं पहचानतीं ? इतनी जल्दी भूल गई हो। तुम तो स्वयं कहा करती थीं कि भूत-प्रेत कुछ नहीं होता। फिर आज इस तरह की बातें क्यों कर रही हो ?

लोई—( स्वस्थ होकर ) हा मेरे प्राणनाथ, मैं तो तुम्हें पाने की सब आशाएँ छोड़ ही बैठी थी। ( गले से लिपट जाती है )

(इतने में कमाली को भी होश आ जाता है। )

कमाली – ( कबीर को देखकर ) अहा ! पिताजी तो आ गए। भगवान् ने हम दुःखियों की पुकार सुन ली।

कबीर – हाँ बेटी ! उस भगवान् ने ही मेरी रक्षा की है। शत्रुओं ने मेरे मारने के लिए कोई कोरकसर न छोड़ी थी ( कबीर ने सब समाचार कह सुनाया। घरवाले आनन्दमग्न हो गए। )

पर्दा गिरता है

× ——— × ——— × ——— ×

# पांचवाँ अङ्क

## पहला दृश्य

[स्थान काशीधाम। समय प्रातःकाल। कबीर अपने परिवार के साथ बैठे हुए हैं।]

कबीर—काशी में रहते हुए मुद्दत बीत चुकी है। अब तो काशी छोड़ने को जी चाहता है।

लोई—महाराज, जब काशी छोड़ने का समय था, उस वक्त तो आप काशी में जमे बैठेथे; किन्तु अब काशी छोड़ने का विचार सहसा क्यों उत्पन्न हो गया? लोग तो दूर-दूर से आकर काशी में निवास करते हैं और बूढ़ों के तो जीवन का सहारा काशी ही धाम है। यहाँ इतने साधु-महात्मा निवास करते हैं। भला, ऐसे पवित्र स्थान को छोड़कर हम और कहाँ जा सकते हैं?

कबीर—लोई! तुम्हें पता नहीं। अब काशी में रहने का समय नहीं रहा। बुढ़ापे में काशी को छोड़ ही देना चाहिए। अब हम कोई प्रचार आदि का कार्य नहीं कर सकते इसलिए काशी में रहने का कोई लाभ नहीं।

लोई—महाराज, क्या जो प्रचार नहीं करते, वे लोग काशी को छोड़ देते हैं? मैं तो देखती हूँ बहुत से बूढ़े लोग दूर-दूर से आकर यहाँ बसते हैं।

कबीर—लोई, बस इसीलिए तो मैं काशी को छोड़ रहा हूँ। बेसमझ लोगों के अन्दर एक ख़याल बैठ गया है कि काशी में मरने से

मोक्ष की प्राप्ति होती है,स्वर्ग का द्वार खुल जाता है। इसीलिए लोग मरने के लिए काशी में दौड़ आते हैं। मैं अपने जीवन से इस कुरीति पर कुठाराघात करना चाहता हूँ। इसीलिए मैंने यह फैसला किया है कि काशी में नहीं मरूँगा।

कमाल—पिताजी, अब हम काशी छोड़कर जायँगे भी कहाँ? काशी में लोगों से परिचय है,इसलिए अपने व्यवसाय में भी आसानी रहती है। नई जगह पर कार्य करना कुछ कठिन ही होता है।

लोई—महाराज, हमारे रिश्तेदार भी तो काशी में ही रहते हैं। कमाली का विवाह काशी में हुआ है और कमाल की बहू भी काशी की ही है। रिश्तेदारों को छोड़कर जाना भी तो मुश्किल है।

कबीर—चाहे मुश्किल हो चाहे आसान। मैं अब काशी में नहीं रह सकता।

कमाल—पिताजी, तो फिर आपने कहाँ जाने का निश्चय किया है?

कबीर—पुत्र, हम मगहर के अतिरिक्त और कहाँ जा सकते हैं। जिस तरह लोगों में यह विश्वास है कि काशी में मरने से मुक्ति प्राप्त होती है, उसी तरह यह भी अन्धविश्वास है कि मगहर में मरने से नरक मिलता है या गधे की योनि में जाना पड़ता है। इसलिए मैंने मगहर में जाने का ही निश्चय किया है।

कमाल—पिताजी, हम आपके साथ हैं। काशी में आपके साथ रहे, मगहर भी आपके साथ चलेंगे।

कबीर—अच्छा तो फिर चलने की तय्यारी करनी चाहिए।

[कमाल का प्रस्थान]

कबीर—लोई ! तुम भी जाओ और चलने की तय्यारी करो। बस आज ही यहाँ से चल पड़ना है।

( लोई का प्रस्थान )

पर्दा गिरता है।

× ——— × ——— × ——— ×

## दूसरा दृश्य

[ स्थान मगहर। समय सायंकाल। कच्चे घर में सन्त कबीर चारपाई पर लेटे हैं। धर्मदास, भागूदास और कमाल बैठे हुए हैं। ]

धर्मदास—महाराज, बीजक ग्रन्थ तय्यार होकर घड़ा-घड़ लोगों में प्रचलित हो रहा है। लोगों में इस का बड़ा आदर हुआ है। बहुत सीप्रतिलिपियाँ तय्यार हो गई हैं तथा बहुत से लोगों और सन्तों को इसके पद कंठ हो गये हैं।

कबीर—बेटा, यह सब तुम्हारे पुरुषार्थ का फल है। तुमने ही बीजक के सम्पादन और प्रचार में इतने परिश्रम से कार्य किया है। तुम्हारे पुरुषार्थ के बिना मेरी वाणी लोगों तक पहुँचनी कठिन थी। हाँ, यह तो बताओ कि भागूदास से बीजक का जो भाग नष्ट हो गया था, उसका क्या हुआ ?

भागूदास—( हाथ जोड़कर ) महाराज, मुझसे भारी अपराध हुआ था। क्षमा करें, बीजक नष्ट नहीं हुआ था, अपितु मेरे पास रक्षित था। मेरे मन में विकार आ गया था। मैं उसे अपने नाम से प्रकाशित करना चाहता था। अब भगवान् ने मेरे हृदय को सत्य के प्रकाश से प्रकाशित किया है। मैंने अपने बीजक को धर्मदास के हवाले कर दिया है। अब धर्मदास के बीजक के साथ मिलान करके उसे प्रकाशित किया

कबीर—( कमाल की ओर देखकर ) अच्छा कमाल, तुम क्या कर रहे हो ?

कमाल—महाराज, मैं भी धर्मपूर्वक अपने कुटुम्ब का भरण-पोषण कर रहा हूँ ।

धर्मदास—गुरुदेव, कमाल ने तो कमाल ही कर दिया। इनके प्रभु-भक्ति के पदों को देखकर तो बड़े-बड़े सिद्ध और महात्मा भी चकित रह जाते हैं।

कबीर—अच्छा है। प्रभु के गुणगान के लिए जो कुछ किया जाय थोड़ा है।

धर्मदास—महाराज, आपकी कृपा से मूर्तिपूजा विषय कशंकाओं का समाधान हो गया है। किन्तु एक शंका और है, उसका भी समाधान कीजिए।

कबीर—कहो।

धर्मदास—आपके उपदेशों में वेदान्त मत और सूफीमत दोनों की झलक दिखाई देती है। आज कृपा करके यह बताइए कि वेदान्तमत और सूफीमत में मौलिक भेद क्या है ।

पोषण कर रहा हूँ ।

धर्मदास—गुरुदेव, कमाल ने तो कमाल ही कर दिया। इनके प्रभु-

भाँति सूफियों के मत में भी हर एक चीज़ खुदा से निकली है और अन्त में उसी में मिल जायगी।

इनके अतिरिक्त कुछ बातों में मौलिक भेद भी है। ब्रह्मवाद में माया की बहुत प्रधानता है, किन्तु सूफी लोग माया के नाम से भी परिचित नहीं। वेदान्तियों ने जो महत्त्व माया को दिया है, सूफियों ने वही महत्त्व ईश्वरेच्छा को दिया है। वेदान्त मत के अनुसार माया के प्रभाव से ही संसार की उत्पत्ति हुई है और माया के प्रभाव से ही जीव ब्रह्म से अलग जा पड़ा है। किन्तु सूफीलोग इस बात का कोई उत्तर नहीं देते कि जब ब्रह्म से भिन्न कोई सत्ता ही नहीं, तो फिर संसार किस प्रकार बन गया। सच तो यह है कि सूफी वेदान्तियों की भाँति समस्याएँ सुलझाने में नहीं लगते। वे किसी बात का वैज्ञानिक रीति पर विश्लेषण करने के लिए तय्यार नहीं। प्रत्येक बात के लिए क्यों और कैसे यह प्रश्न वहाँ खड़े नहीं किये जाते। उनके मत में खुदा की इच्छा को ही प्रमुख माना गया है। खुदा ने अपनी इच्छा और शक्ति द्वारा अभाव से ही इस भाव-स्वरूप संसार को उत्पन्न किया है।

दूसरा मौलिक भेद इन दोनों में यह है कि ब्रह्मवाद का आरम्भ शैवों की अध्यक्षता में हुआ, किन्तु कालक्रम से यह निरा वैष्णव मत रह गया। ब्रह्मवाद में किसी प्रकार की हिंसा का अवकाश नहीं रहा, अतः इसे शुद्ध वैष्णव मत कहा जा सकता है। किन्तु सूफी मत शैव और वैष्णव मतों की खिचड़ी है। कुछ सूफी हिंसा को निषिद्ध समझते हैं और कुछ पशुबलि पर मुग्ध हैं।

तीसरा भेद इन मतों में यह है कि ब्रह्मवाद में तो निर्गुण

ब्रह्म की प्रधानता है और सगुण ब्रह्म को गौण स्थान मिला है ; किन्तु सूफी मत में सगुण ब्रह्म की प्रधानता है और निर्गुण ब्रह्म को गौण रक्खा गया है।

वेदान्तवाद के अनुसार संसार प्रवाह से अनादि है,किन्तु सूफी इसे किसी रूप में भी अनादि मानने को तय्यार नहीं। हाँ, कुछ सूफियों का विश्वास पुनर्जन्म में अवश्य है। ब्रह्मवाद के माननेवाले लोगों में अभी तक क्रियात्मक धर्म विद्यमान है, किन्तु सूफी मत की बागडोर प्रायः क्रियाहीन लोगों के हाथ में चली गई है।

धर्मदास—महाराज, आपने बड़ा अनुग्रह करके मेरी समस्याओं को सुलझाया है। इसीलिए तो कहते हैं कि गुरु के बिना मनुष्य की कहीं भी गत नहीं।

कबीर—पुत्र, गुरु की महिमा का वर्णन नहीं हो सकता। यदि मेरे गुरु महाराज की मुझ पर अपार कृपा न होती तो मेरा बेड़ा मंझधार में डूब जाता।

धर्मदास—सत्य है महाराज ! वे मनुष्य महा कृतघ्न हैं जो गुरु के उपकारों को भूल जाते हैं।

कबीर—पुत्र, मैंने तो साफ कह दिया है—

सतगुर की महिमा अनन्त, अनन्त किया उपकार।
लोचन अनन्त उघाड़िया, अनन्त दिखावणहार॥

तथा—

बलिहारी गुरु, आपने घड़ि-घड़ि सौ-सौ बार।
मानुष से देवता किया, करत न लागी बार॥

धर्मदास—महाराज, यह सत्य है।

कबीर—बेटा, अब समय काफी हो चुका है। जाओ आराम

करो। मैं भी कुछ समय योग ध्यान में लगाना चाहता हूँ।

( सबका प्रस्थान )

पर्दा गिरता है।

× ——— × ——— × ——— ×

## तीसरा दृश्य

[स्थान मगहर। समय सायंकाल। कबीर मृत्यु-शय्या पर। सम्बन्धी तथा शिष्य गण पास बैठे हैं।]

कबीर—( धर्मदास से ) बेटा, शायद लोग समझते हों कि कबीर विरोधियों से डरकर मगहर भाग गया है। किन्तु वह दिन आज आ गया है जिसके लिए मैं मगहर आया था।

धर्मदास—महाराज, लोग कुछ कहें किन्तु जाननेवाले तो जानते ही हैं जिस बात के लिए आप मगहर में आये हैं।

कबीर—हाँ, आज मेरा यहाँ आने का उद्देश्य पूरा होना चाहता है।

धर्मदास—महाराज, आप यह क्या बातें कर रहे हैं ?

कबीर—पुत्र, आज हम शून्य में समा जायँगे।

( गाते हैं )

दुलहिन गाओ मंगलाचार।
हमरे घर आये राम भर्तार॥

धर्मदास—महाराज, भगवान् आपको चिरजीवी करें। अभी संसार को आपकी बहुत आवश्यकता है।

कबीर—अब मुझे इस संसार की आवश्यकता नहीं रही।

कमाल—पिताजी, तबीअत तो ठीक है ?

कबीर—हाँ बेटा, जीवन में केवल सुख की घड़ी आज ही आई है।

कमाल—भगवान् आपको स्वस्थ करे।

कबीर—मैं पूर्ण स्वस्थ हो गया हूँ।

धर्मदास—महाराज, कोई उपदेश कीजिए।

कबीर—हाँ बेटा, एक उपदेश करना शेष रह गया है।

धर्मदास—गुरुदेव, हम सुनने के लिए सावधान हैं।

[ एक मुसलमान कबीर-भक्त का प्रवेश ]

भक्त—( धर्मदास के कान में ) मगहर के सब कबीर-पन्थी मुसलमान यह चाहते हैं कि कबीर की लाश को दफन किया जाए अतः आप गुरु की लाश हमें दें, नहीं तो फिसाद का खतरा है।

धर्मदास—( आहिस्ता से ) आप इस समय यह बखेड़ा खड़ा न करें। गुरुजी को जीवन की अन्तिम घड़ियाँ आराम से गुजारने दें। यदि उन्हें इस संघर्ष का पता लग गया तो निश्चय ही इस अन्त समय में भारी दुःख होगा। आप कृपा करके उनका मरना न बिगाड़िए।

( वह व्यक्ति चुपचाप चला जाता है )

कबीर—बेटा, क्या कहता था यह आगन्तुक भक्त?

धर्मदास—कुछ नहीं महाराज, केवल आपके दर्शन करने आया था और आपकी दशा पूछता था।

कबीर—अच्छा, दो गज लम्बी और एक गज चौड़ी भूमि लीप दो और उस पर हमें लिटा दो।

धर्मदास—जो आज्ञा महाराज।

( वैसा ही करते हैं )

कबीर—अच्छा, हमारे ऊपर एक सफेद चादर ओढ़ा दो।

( चादर ओढ़ा दी जाती है )

कबीर—( गाते हैं )

कहै कबीर मोहिं ब्याह चले हैं पुरुष एक अविनासी।

[ अचानक चादर के नीचे से निकलकर एक ज्योति आकाश की ओर उड़ जाती है। सब लोग चकित रह जाते हैं। जब चादर उठाकर देखा जाता है, तो कुछ फूलों के ढेर के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं रहना। ]

पर्दा गिरता है।

समाप्त

---

# सुकवि सोहनलाल जी की रचनाएँ

**भैरवी** की राष्ट्रीय कविताएँ गौरव की वस्तु हैं। इन्हें पं० जवाहर-लाल नेहरू तक ने पसन्द किया है। खादी प्रतिष्ठानों ने इसकी हज़ारों प्रतियाँ बेची हैं। भैरवी गांधी युग का सर्वश्रेष्ठ काव्य है। मूल्य २॥≈) दो रुपये ग्यारह आने।

**वासवदत्ता** हिन्दी का आधुनिक काव्य है। इस काव्य की बड़ी प्रशंसा है। पुस्तक देखने ही योग्य है। मूल्य १॥) एक रुपये आठ आने।

**विषपान** खण्ड काव्य है। इसकी रचना समुद्रमन्थन की पौराणिक कथा के आधार पर हुई है। भाषा में प्रवाह तथा ओज और पात्रों का सजीव चित्रण कवि की विशेषता है। मूल्य १) एक रुपया।

**पूजागीत** में द्विवेदीजी की नवीन कविताओं का संग्रह है। प्रत्येक कविता जीवन में स्फूर्ति का संचार करती है। फेदरवेट पीले काग़ज़ पर छपी पुस्तक का मूल्य २) दो रुपये।

**कुणाल** में अशोक के राजकुमार कुणाल की कथा करुणापूर्ण भाषा में बड़े रोचक ढंग से वर्णित है। पढ़ते समय अशोककालीन भारतवर्ष का चित्र दृष्टि के सामने आ जाता है। मूल्य ३) तीन रुपये।

Hindi Sahitya

पता—

मैनेजर (बुकडिपो), इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।